योगविद्या

वर्ष 10 अंक 11
नवम्बर 2021
सदस्यता डाकखर्च – रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि: ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2021

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के रंगीन फोटो 1–3 : अंतरराष्ट्रीय योग दिवस, 21 जून 2021
4 : स्वामी शिवानन्द एवं स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

प्रार्थना की महिमा

प्रार्थना एक महान् आध्यात्मिक शक्ति है। आस्था के साथ, भक्तिपूर्ण हृदय से प्रार्थना की जानी चाहिए। प्रार्थना की क्षमता के सम्बन्ध में तर्क मत कीजिए। प्रार्थना अत्यन्त प्रभावशाली होती है। प्रार्थना करते समय अपने भीतर किसी प्रकार की धूर्तता या कुटिलता न रखिये, बल्कि अपने हृदय के द्वार पूरी तरह से खोल दीजिए। तब आप प्रार्थना की वास्तविक महिमा का अनुभव कर पायेंगे।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 10 अंक 11 नवम्बर 2021
(प्रकाशन का 59 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 लिखित जप का महत्त्व
10 सत्यम् वाणी
17 प्रसन्नता और जप से जीवन में निखार
24 मन को संभालो
35 योग संवाद
42 कर्मयोग – गीता के आलोक में
48 परमहंस सत्यानन्द – मेरी स्मृतियाँ
49 योग विद्यालय का कोरोना प्रबंधन
51 योग की कुछ बातें

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

लिखित जप का महत्त्व

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

ध्यान का अभ्यास करने के लिए लिखित जप एक आनन्ददायक और व्यावहारिक विधि है। किसी मंत्र या भगवान के नाम को मौखिक या मानसिक रूप से बार-बार दुहराने का अभ्यास ही जप कहलाता है। लिखित जप में आप मंत्र को बार-बार लिखते हैं। यह एक शक्तिशाली अभ्यास है जिसके व्यापक लाभ होते हैं। वैसे जप के सभी प्रकार के अभ्यासों में ऐसा होता है, पर मंत्र लेखन मन में कुछ ऐसी एकाग्रता और हृदय में कुछ ऐसी शान्ति लाता है, जिसे अन्य प्रकार की जप-विधियों से प्राप्त करना कठिन है। लिखित जप की विधि मन और शरीर के ऐसे भागों को क्रियान्वित करती है जो अन्य प्रकार के जप में सक्रिय नहीं होते।

लिखित जप एक ऐसी साधना है जो सदा सफल होती है और जिसमें कोई खतरा भी नहीं है। जो साधक अन्य प्रकार की ध्यान विधियों का प्रयास करते हैं वे प्राय: किसी-न-किसी इन्द्रियजनित विक्षेप की शिकायत करते हैं। उनका मन एक विक्षिप्त वानर की तरह इधर-उधर भागता है। आखिर कौन इस दुराग्रही और स्वेच्छाचारी मन को नियंत्रण में रखने की अपेक्षा कर सकता है? केवल ध्यान का दीर्घ अभ्यास करने वाले साधक को मन पर नियंत्रण तथा स्वामित्व प्राप्त हो सकता है। लेकिन लिखित जप की साधना में ऐसी कोई सीमाएँ नहीं हैं। इसका अभ्यास जितना ही सरल है, उतना ही प्रबल इसका प्रभाव है।

हाथ और अंगुलियाँ, जिनमें प्रचुर मात्रा में स्नायु होते हैं; आँखें, जो आंतरिक और बाह्य जगत् के मध्य सेतु हैं तथा मन – ये सभी लेखन कार्य में सहयोगपूर्वक संलग्न होते हैं और इसलिए विक्षेप अपने आप विलीन हो जाते हैं। ईश्वर का नाम लिखने के बाद मनोकामनाएँ आश्चर्यजनक रूप से और अनायास ही पूरी हो जाती हैं। जो निष्काम भाव से लिखते हैं वे आध्यात्मिक मार्ग पर तेजी से प्रगति करते हैं।

एक स्थान पर शांतिपूर्वक बैठकर ईश्वर का नाम निरंतर लिखने की साधना अन्य सभी आध्यात्मिक साधनाओं की सम्पूरक है। प्रतिदिन एक निश्चित संख्या में ईश्वर के नाम या एक निश्चित संख्या में श्लोक लिखने का संकल्प वास्तव में एक मंगलकारी सत्संकल्प है।

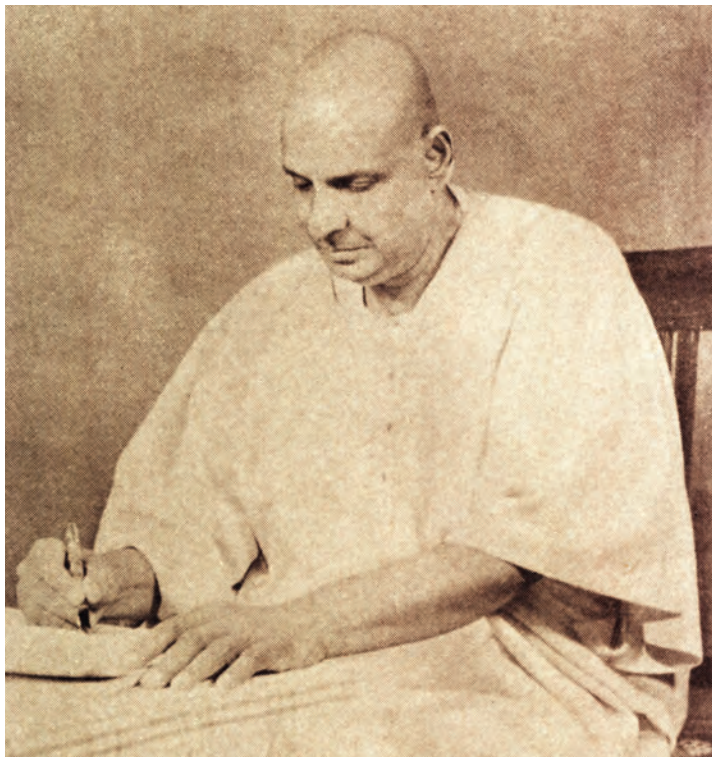

ध्यान, प्रार्थना या पूजा की अन्य विधियों में अपनी सभी इन्द्रियों को एक ही साथ एकाग्र करने की संभावना कम है, दीर्घकालीन अभ्यास से ही यह सम्भव है, लेकिन लिखित जप में ऐसा नहीं है। जब नेत्र आदि इन्द्रियाँ, मन और शरीर के सभी अंग एकाग्र होने के लिए एक साथ सहयोग करते हैं तो लिखित जप के सकारात्मक परिणाम प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त होते हैं। लिखित जप एक शक्तिशाली रूपांतकारी साधन बन जाता है। यह साधक को उन गहराइयों तक ले जाता है जहाँ अन्यथा आप नहीं पहुँच सकते। यह आप में दिव्य ऊर्जा का अवतरण करता है, और आपके माध्यम से जगत् में उसका प्रसार करता है।

लिखित जप के लिए उपकरण

आप किसी भी कागज और कलम के साथ लिखित जप शुरू कर सकते हैं, लेकिन बेहतर यही रहेगा कि आप लिखित जप के लिए अलग से कलम और कॉपी या डायरी रखें।

हालाँकि किसी भी उपलब्ध उपकरण से लिखित जप किया जा सकता है, पर जब आप उन्हीं उपकरणों को बार-बार उपयोग में लाते हैं और वह भी केवल लिखित जप के लिए, तो वे मंत्र के साथ समस्वरित होने लगते हैं। इससे आपके लिए मंत्र की भावना में प्रवेश करना सरल हो जाता है। कोई ऐसी कलम चुन लें जिससे लिखावट सरल और सुंदर हो, कोई ऐसी कॉपी या डायरी खोज लें जो आपके लेखन को अधिक आनन्ददायक बना दे।

व्यावहारिक स्तर पर मंत्र लेखन आपके दैनिक कार्यों में भी सहायता कर सकता है। जब आपको लगे कि मन इधर-उधर भटकने लगा है या नकारात्मकता में फिसलने लगा है तो उस समय जैसे-तैसे लिखित जप कर लेना बहुत लाभप्रद सिद्ध होगा। किसी संगोष्ठी या कक्षा में बैठे हुए या टेलीफोन पर बात करते हुए भी अगर आप मंत्र लिखते रहेंगे तो यह आपकी चेतना को दिव्य गुणों के प्रति उन्मुख करने में सहायता करेगा। हालाँकि यह विशुद्ध ध्यानात्मक लिखित जप का विकल्प नहीं है, पर फिर भी इसके माध्यम से आप ऐसी कालावधियों का सकारात्मक उपयोग कर पायेंगे जो अन्यथा आपके लिए खतरनाक साबित हो सकती थीं।

लिखित जप की विधि

लिखित जप की ध्यानात्मक साधना में सिद्ध होने के लिए निम्नलिखित चरणों का अनुसरण किया जा सकता है –

चरण 1, मानसिक ऊर्जाओं का एकीकरण – अभ्यास शुरू करने के बाद कुछ मिनट अपने मन को शांत करने और अपनी भावनाओं को अपने लक्ष्य पर केंद्रित करने के लिए लगाएँ। फिर अपना सारा ध्यान अपने इष्ट पर केंद्रित करें। हो सकता है कि हर समय ऐसा कर पाना सम्भव न हो। यदि ऐसा नहीं कर पा रहे हों तो अपनी नकारात्मकता को स्वीकार करें और उसे ईश्वर को समर्पित कर दें।

चरण 2, आसन – अपने मेरुदण्ड को सीधा रखें। जिस आसन में आप बैठे हैं उसके प्रति सजग बनें।

चरण 3, विश्रांति – अपनी मांसपेशियों को विश्रांत और शिथिल रखें। विशेष रूप से चेहरे, गर्दन और कंधों की तनाव-मुक्ति पर ध्यान दें। अपनी सजगता को इन क्षेत्रों में मानसिक रूप से निर्देशित करते हुए अपने तनाव को मुक्त करें।

चरण 4, एकाग्रता – संगीत, टेलिविजन, टेलीफोन आदि विक्षेपों से मुक्त रहें। अपने मन को मंत्र पर एकाग्र करें।

चरण 5, संकल्प – आपका संकल्प और निश्चय महत्त्वपूर्ण है। जब आप मंत्र लिखते हैं तो संकल्प करें कि मंत्र आपके शरीर और मन को पवित्र करे। आप ऐसी भी कल्पना कर सकते हैं कि आपके इष्ट आपके हृदय में आसीन होकर शुभ स्पन्दनों की वर्षा कर रहे हैं।

चरण 6, अपने मंत्र के साथ बने रहें – यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि मंत्र समाप्त करने के बाद आप तुरंत नहीं उठ जायें। मंत्र के साथ लगभग दस मिनट तक या तो मौन रूप से जुड़े रहें या मंत्र को गुनगुनाते रहें। अपने गुरु या इष्ट के सान्निध्य का अनुभव करें। ऐसा करने से मंत्र के आध्यात्मिक स्पन्दन बने रहेंगे और जब आप अपनी दिनचर्या पुनः प्रारम्भ करेंगे तो दैनिक कार्य करते समय भी आपकी ध्यानात्मक सजगता बनी रहेगी।

लिखित जप की निष्ठायुक्त और निरंतर साधना से दिव्यता के साथ आपका सम्बंध गहरा होता जाएगा और भावनात्मक असंतुलन दूर होते जाएँगे। आध्यात्मिक स्तर पर आप पूर्ण समन्वय और संतुलन का अनुभव करेंगे।

लिखित जप के नियम

शारीरिक और मानसिक शुचिता का पालन करना चाहिए। मंत्र लिखने के लिए बैठने के पूर्व चेहरा, हाथों, पैरों और मुख को धो लेना चाहिए। प्रयास करना चाहिए कि मन पवित्र रहे। लोभ, वासना, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा आदि से मुक्त रहें, इन विचारों को दूर कर दें।

लिखित जप के लिए एक मंत्र चुन लें, चाहे वह कोई सार्वभौमिक मंत्र हो या आपका अपना गुरु मंत्र, और उसे कॉपी या डायरी में किसी भी लिपि में लिखना शुरू करें। प्रतिदिन एक से तीन पेज तक भरें।

साधना के समय मौन का पालन करें। बहुत अधिक बोलने से ऊर्जा का अपव्यय होता है। मौन अधिक कार्य संपादन में सहायक होता है।

संभव हो तो एक ही समय और एक ही स्थान पर प्रतिदिन बैठें। नियमितता और समयनिष्ठा का पालन होना चाहिए। जितनी देर तक संभव हो एक ही आसन में बैठें। बार-बार आसन बदलने से बचें, क्योंकि शरीर के साथ मन भी चल पड़ता है। एक ही आसन में बैठना आपकी तितिक्षा शक्ति को बढ़ायेगा और ऊर्जा को संचित करेगा।

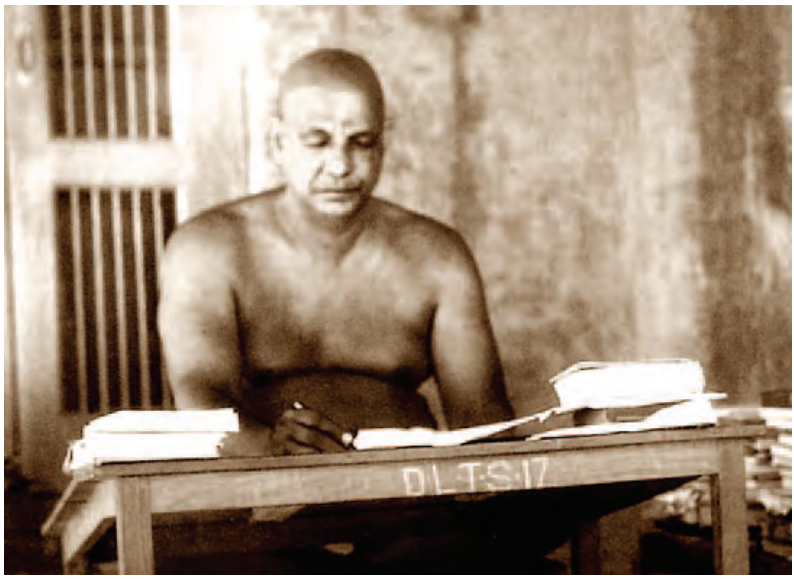

इधर-उधर देखने से बचें। अपनी आँखों को कॉपी पर लगाए रखें। यह मन को एकाग्र और बिखरी ऊर्जाओं को केन्द्रित करने में सहायक होगा।

कॉपी पर मंत्र लिखने के साथ-साथ मंत्र को मानसिक रूप से दुहराते रहें। यह मन पर तीन प्रकार के प्रभाव डालेगा – मंत्रोच्चारण, मंत्र लेखन और मानसिक ऊर्जाओं का एकीकरण। धीरे-धीरे आपका सम्पूर्ण व्यक्तित्व मंत्र में संलग्न और तन्मय हो जाएगा।

लिखने की एक ही पद्धति अपनाएँ, ऊपर से नीचे या बाएँ से दाहिने की ओर। यह आपके मन में एकाग्रता के साथ सुव्यवस्था और अनुशासन लायेगा। लिखने में जल्दबाजी न करें। स्पष्ट और सुन्दर अक्षरों में लिखें।

प्रत्येक बैठक के लिए मंत्रों की संख्या निश्चित कर लें। इतने मंत्र एक बैठक में और एक ही बार में लिखे जाने चाहिए। किसी एक पंक्ति के अंत में पहुँचने पर मंत्र को बीच से नहीं तोड़ें। सही सजगता आपको उसी पंक्ति में मंत्र पूरा करने में मदद करेगी। यह आपके ध्यान को यथावत् रखेगी और आपको मंत्र से संपर्क खोने नहीं देगी।

जब आपके द्वारा किसी मंत्र का चयन कर लिया जाता है तो उसी पर जीवनभर लगे रहने का प्रयास करें। मंत्र में बार-बार परिवर्तन उचित नहीं। इसके कारण अवचेतन मन में उत्तेजना हो सकती है जिससे आंतरिक द्वन्द्व होता है।

जल के लिए एक जगह बीस फीट गहरा खोदना, बीस जगह एक-एक फुट खोदने से कहीं अच्छा है। इससे आपको मंत्र की चेतना से जुड़ने में सहायता मिलेगी और आपकी चेतना का द्रुत विकास होगा।

लिखित जप के लाभ

इन नियमों का यदि निष्ठापूर्वक पालन हो तो वे आपके आध्यात्मिक विकास में बहुत सहायता करेंगे। आपकी एकाग्रता का स्तर उन्नत होगा। दीर्घकाल तक निरंतर अभ्यास करने से मंत्र की अंतर्निहित शक्ति जागृत होगी जो आपके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को मंत्र की दिव्यता से भर देगी।

लिखित जप के लाभों का पूरी तरह वर्णन नहीं किया जा सकता। हृदय की पवित्रता और मन की एकाग्रता के साथ लिखित जप आसन में दक्षता और इन्द्रियों पर नियंत्रण प्रदान करेगा, विशेष रूप से नेत्रों और जिह्वा का नियंत्रण। साथ ही सहन शक्ति और तितिक्षा भी बढ़ायेगा। आपको शीघ्र मानसिक शांति प्राप्त होगी। मंत्र शक्ति के द्वारा आप अपने इष्ट के समीप आते जायेंगे।

संक्षेप में, लिखित जप से आपको निम्नांकित परिणाम मिलेंगे –

एकाग्रता – विक्षेप कम होते जायेंगे क्योंकि मन, जिह्वा, हाथ और नेत्र, सभी मंत्र में संलग्न रहते हैं। यह एकाग्रता की क्षमता और कर्म में दक्षता बढ़ाता है।

नियंत्रण – मंत्र की शक्ति से मन नियंत्रित होता है और वह तीव्र गति से अच्छी तरह कार्य करता है।

क्रम-विकास – मंत्र के बारम्बार सम्पर्क से अवचेतन मन में सूक्ष्म आध्यात्मिक संस्कार बनते हैं जो चेतना के क्रम-विकास को गति प्रदान करते हैं।

शांति – यदि आप चिन्ताओं या अशुभ घटनाओं से परेशान हैं तो मन शीघ्र ही शांत और स्थिर हो जायेगा।

शक्ति – जहाँ आप मंत्र लिखते हैं या मंत्र की कॉपी रखते हैं, कालांतर में उस स्थान के वातावरण में एक प्रबल आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न हो जाती है जो आध्यात्मिक प्रगति में सहायक होती है। इन कॉपियों को अच्छे ढंग से सम्मान और पवित्रता के साथ रखना चाहिए। जब कॉपी पूरी हो जाती है तो उन्हें पूजा कक्ष या अन्य किसी पवित्र स्थान पर रखना चाहिए। इन मंत्र कॉपियों की उपस्थिति मात्र से अनुकूल स्पन्दन निर्मित होते हैं जो साधना में सहायक होते हैं।

सत्यम् वाणी

मैं युद्ध, शांति और सामाजिक हिंसा जैसे विषयों पर शोध कर रही हूँ। चाहे वह सर्बिया हो या अफगानिस्तान या हिंदुस्तान, सब तरफ हिंसा बढ़ती हुई दिख रही है। इसका समाधान कैसे और कहाँ मिल सकता है?

इसका उत्तर तो बहुत सरल है। हम अपना स्वधर्म खोजने की बजाय पाश्चात्य जगत् से प्रेरणा ले रहे हैं। अगर अपनी भिन्नताओं के कारण मैं और तुम साथ नहीं रह सकते तो शांति कभी नहीं आएगी। समझ के बिना शांति आ ही नहीं सकती। दूसरे को समझना ज्ञान की चरम पराकाष्ठा है। पाश्चात्य जगत् में आखिर क्या है? दूसरों के आचार-विचार, दूसरे की तहजीब, दूसरे की संस्कृति, दूसरे की भाषा, वे पनपने ही नहीं देते हैं। उनका पूरा समाज एक जैसा होता है। सब अंग्रेजी ही बोलेंगे या सारा काम फ्रेंच में ही होगा। हिन्दुस्तान में हमेशा से दूसरे के रीति-रिवाजों को, दूसरे की जुबान को, दूसरों के कपड़े पहनने के तरीके को, उसके कानूनों को, उसके नृत्य और संगीत की प्रणाली को, उसकी पूजा-पाठ की प्रणाली को न मानते हुए भी स्वीकार किया गया।

उत्तर भारत में पूर्णमासी को सब शुभ कर्म होते हैं। हिंदुओं की बात बोल रहा हूँ। दक्षिण भारत में सब अमावस्या को होते हैं। अगर कोई पूछे कि क्यों होते हैं अमावस्या को, तो भारतीय लोग बोलेंगे, 'क्या मालूम, पर होने दो न! अपने को उससे क्या फर्क पड़ता है!' अब इस बात के लिए हम झगड़ें क्या? नहीं, वहीं से अमन की मौत होती है। अमन की मौत की केवल एक वजह है। मुल्कों को दूसरे के विचारों के प्रति समझ नहीं होती। यह जरूरी नहीं कि आप ईसाई धर्म की तरह प्रार्थना करें या हिन्दू धर्म की तरह प्रार्थना करें, या मूर्ति पूजा करें, या पुनर्जन्म माने, या भरतनाट्यम् को पसन्द करें, या पाश्चात्य नृत्य को पसन्द करें – आप जो करते हैं, वह आपका निजी मामला है। मगर मनुष्य का एक सामाजिक चेहरा भी होता है। मेरा भी है, सबका है। उस सामाजिक चेहरे में मैं दूसरों के साथ अड़ जाता हूँ, और जब दूसरों के साथ अड़ता हूँ, बस वहीं से नादानी शुरू होती है। यह नादानी हिंदुस्तान में इसलिये शुरू हुई क्योंकि आज हमें पश्चिम से इंजेक्शन मिलते हैं।

समाज में भाषा, धर्म और संस्कृति जैसी बहुत-सी चीजें हैं जो हमें ठीक से समझनी पड़ेंगी। अब संस्कृति एक ऐसी चीज है जो इंसान-इंसान में अलग

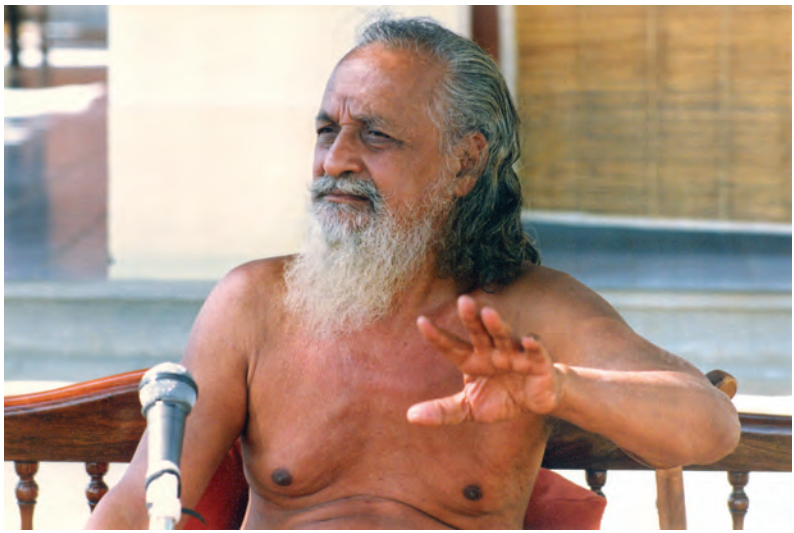

होती है। बाप और बेटे की संस्कृति में अन्तर होता है, उनके शौक में फर्क होता है। पति-पत्नी, जिनका रिश्ता आप लोग जन्म-जन्म का मानते हो, उनके शौक में फर्क होता है। जुड़वा भाइयों की संस्कृति में अन्तर होता है, उनके शौक में फर्क होता है। जब हर इंसान एक-दूसरे से अलग है तब इसके लिए दो ही तरीके हैं – या तुम उस फर्क को उजागर करो और आपस में लड़ो या उस फर्क को नजर अंदाज करो और मजे में रहो। तुम्हें मांसाहारी भोजन खाना है तो तुम खाओ। हमें शाकाहारी खाना है, हम शाकाहारी खायेंगे। फिर ऐसा क्यों कि तुम हमेशा हमें गाली देते रहते हो और हम तुम्हें? एक छोटी-सी बात पर झगड़ा हो जाता है।

शान्ति का मार्ग

शान्ति का यही तरीका है कि लोग एक-दूसरे को समझें और स्वीकार करें, जिसे पाश्चात्य जगत् को सीखना पड़ेगा। हमने वहाँ कई जगह असहिष्णुता को देखा। हम सारायेवो कई बार जा चुके हैं, सबसे पहले हम गये थे जब हम स्विट्ज़र्लैण्ड में थे। यूगोस्लाविया भी जाते रहते थे। हमें सब चीज अजीब लगती थी, एकदम अजीब। लेकिन अब पश्चिम में एक वर्ग पैदा हो रहा है जो युवा है, 20-25 साल के अन्दर। यह वर्ग नई विचारधारा रखता है। सफेद बाल वालों या 35-40 साल के लोगों की बात नहीं बोलता हूँ, जो 20-25

साल के लड़के-लड़कियाँ हैं उनके विचारों में परिवर्तन आ गया है। वे लोग कहते हैं कि अगर कोई पुनर्जन्म मानता है तो मुझे क्या फर्क पड़ता है और यदि कोई पुनर्जन्म नहीं मानता तो भी मेरे को क्यों फर्क पड़ना चाहिए? पुनर्जन्म के आधार पर तुम्हारे और हमारे बीच झगड़ा हो जाए, यह तो अच्छी चीज नहीं है। कोई विष्णु जी की मूर्ति की पूजा करता है, कोई अद्वैत निराकार की उपासना करता है। अब इस वजह से हमारे बीच झगड़ा हो जाये तो कितनी फालतू चीज है। तुम्हारे विष्णु की उपासना करने से, तुम्हारे पुनर्जन्म मानने से, तुम्हारे संन्यास लेने से, तुम्हारे बालों का मुण्डन करने से मेरे को क्या फर्क पड़ता है? आखिर मुझे तुम्हारी इतनी फिक्र क्यों लगी हुई है।

इस देश में ऐसा नहीं है। सिर से लेकर नीचे तक बदन ढकने वाली संस्कृति नंगे साधुओं को भी स्वीकार करती है, उनकी पूजा भी कर लेती है। संन्यासियों में जो अवधूत होते हैं, नागा होते हैं, उनके महिला प्रतिरूप को भैरवी कहा जाता है। कुम्भ मेला में आप देखियेगा, एकदम नंग-धड़ंग रहती हैं। हम लोगों ने उसको भी स्वीकार किया है। अब यह संस्कृति कहाँ से आई है, वह तो हम नहीं कह सकते। आसाम से आई या दक्षिण एशिया से आई कि अफ्रीका से कि सिक्किम से कि ईरानियों के साथ आई, वह हमें मालूम नहीं, मगर है यहाँ।

जब तुम राष्ट्र को एक परिवार कहते हो तो उस परिवार को एक तरह से व्यवहार करने को मत बोलो, क्योंकि इस परिवार में, इस मुल्क में, या दुनियाभर में लोग इतिहास के दौरान कई जगहों से आये हैं। जैसे अमेरिका में कई जगह से गये हैं, चीन में कई जगह से गये हैं, वैसे हिन्दुस्तान में भी कई जगह से आये हैं। यहाँ या तो किसी जमाने में अवसर खोजते आये, क्योंकि यह तो सोने की चिड़िया थी या फिर राजनैतिक उत्पीड़न से भागकर आये या किसी और वजह से आए। पारसी लोग आये, मुगल लोग आये, तुर्क लोग आये, अफ्रीका से लोग आये, दक्षिण पूर्व एशिया से लोग आये, नेपाल-भूटान से लोग आये, अपनी-अपनी जगह बसा लिये गए। राजाओं ने कहा, रहो यहाँ, जमीन जोतो और खाओ। उनके रीति-रिवाजों पर न तो राजा ने हस्तक्षेप किया और न ही जनता को हस्तक्षेप करने दिया। जब तक जन मानस तैयार नहीं किया जाता, तब तक किसी भी रीति-रिवाज को बदल नहीं सकते हो।

आज यूरोप के लोग चाहते हैं कि वहाँ मंदिर बनें, भारत के साधु लोग आकर आश्रम चलायें, संस्कृत सिखायें, दर्शन सिखायें। कई लोग संन्यास लेना चाहते हैं, पर वहाँ का समाज और सरकार तैयार नहीं है। स्पेन में बहुत-

से साधक हैं जिनको हमने संन्यास दिया है, पर वे एफीडेविट करके अपना नाम नहीं बदल पाते हैं। आपकी चाहे इस्लाम में श्रद्धा हो या वैदिक धर्म में या ईसाई धर्म में या आचार्य रजनीश पर, हरेक को अपना रास्ता तो खुद ही चुनना पड़ेगा। राजा कैसे तुम्हारे लिए रास्ता चुन सकता है? समाज में राजा और प्रजा का काम है कि दूसरे के रीति-रिवाजों को समझकर व्यवहार करें। शान्ति का इसके अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं है।

पहले दूसरे के धर्म को आदर देना होगा, और किसी मुल्क में एक मजहब नहीं हो सकता। आज के जमाने में, जबकि सामाजिक व्यवहार इतना बढ़ रहा है, कोई देश एक धर्म पर आधारित नहीं हो सकता, चाहे वह मध्य एशिया हो या हिन्दुस्तान, चीन, रूस, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी या अमेरिका। जो सार्वभौमिक धर्म की बात करते हैं, वे गलत कहते हैं। जैसे लोगों के रंग, कद-काठी, भाषायें, खाने के तरीके, कपड़े पहनने के तरीके अलग हैं, उसी तरह भगवान के पास पहुँचने के रास्ते भी अलग हैं। तुम देवघर आये हो। कलकत्ता से नहीं बल्कि पटना से होते हुए आये हो। पर कलकत्ता वाले आदमी को अगर यहाँ पहुचना होगा तो क्या पटना होते हुए आयेगा? लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए एक रास्ता नहीं है, जितने आदमी उतने रास्ते। शिव महिम्नः स्तोत्र में एक पंक्ति आती है, बहुत सुन्दर है। पुष्पदंत कहता है – *रुचीनां वैचित्र्याद् ऋजुकुटिलनानापथजुषां, नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव* – अपनी रुचियों की विचित्रता अलग-अलग होने की वजह से लोगों के रास्ते सीधे-टेढ़े कई तरह के रहते हैं। मनुष्यों का गन्तव्य एक है। जहाँ उसको पहुँचना है, वह जगह एक है। जैसे सारी नदियाँ बहती हुई अन्त में समुद्र में ही मिलती हैं, उसी तरह से किसी भी धर्म का सच्चे दिल से पालन करने वाला आदमी ईश्वर के पास ही पहुँचेगा, दूसरी जगह नहीं पहुँचेगा।

यह जो आपने कहा कि हिन्दुस्तान जैसे देश में असंतुलन हो रहा है, इसका मुख्य कारण यही है कि हिन्दुस्तान के लोगों ने अपनी संस्कृति पर आस्था रखना छोड़ दिया और यूरोप के तरीके से सोच रहे हैं। यूरोपी तरीका है लड़ाई का। पिछली शताब्दियों में उन्होंने दो बड़ी लड़ाइयाँ लड़ी हैं जिसमें करोड़ों लोग मरे हैं। लाखों औरतें विधवा हुई हैं, लाखों बच्चे अनाथ हुए हैं।

शांति और सामंजस्य के लिए सबसे पहले हिन्दुस्तान में हरेक आदमी को टॉलेरेंट बनाना पड़ेगा, उदार और सहिष्णु बनाना होगा। केवल मजहब के मामले में नहीं, हर मामले में। उदारता और सहिष्णुता का कोई विशेष

दायरा नहीं होता। पति-पत्नी के बीच सहिष्णुता का क्षेत्र धर्म थोड़े ही होता है। बाप-बेटे में सहिष्णुता का क्षेत्र मजहब थोड़े ही होता है। दूसरे की बात जो अपने को समझ में नहीं आये, उसको समझना, उसको कहते हैं टॉलेरेंस, सहिष्णुता। मुझे लगता है कि शान्ति का यही एक रास्ता है जो महापुरुषों ने आदि काल से यहाँ बनाया है।

अपने ही देश में आप अच्छी तरह से देखो, कितनी भिन्नता है। भाषाओं की भिन्नता तो जानी जाती है, शक्ल और भोजन में भी भिन्नता है। मद्रासी आदमी रोटी नहीं खा सकता है। हमारे यहाँ जो उड़िया रसोइये आते हैं, वे हमलोगों के लिए रोटी बनाते हैं, पर अपने लिए भात बनाते हैं क्योंकि रोटी नहीं खा पाते हैं। इतनी भिन्नता है यहाँ। अब उसके लिए एक-दूसरे को गाली दें, वह नहीं होना चाहिये।

क्षेत्रवाद बनाम संघवाद

हमारे देश में हमेशा सीमित क्षेत्र को ही लेकर शान्तिपूर्वक शासन चला है। भारतवर्ष में अनादि काल से, जब से हमने पुराण-इतिहास पढ़े हैं, प्रथा यही थी कि हर एक क्षेत्र स्वतंत्र था, उसकी अपनी सेना थी, उसके अपने कायदे-कानून थे, उसकी अपनी जुबान थी, उसकी अपनी सीमा थी, किन्तु वह एक चक्रवर्ती को अपना राजा मानता था। सम्राट् को चक्रवर्ती कहते थे। वह चक्रवर्ती जब मरता था तो जो उसकी गद्दी पर बैठता था, उसे इन लोगों के पास जाकर

स्वीकृति लेनी पड़ती थी कि हाँ, मैं चक्रवर्ती हूँ। उसे आप अश्वमेध यज्ञ कहो या राजसूय यज्ञ कहो, पर मुख्य बात यही थी। जैसे रामचन्द्र या दशरथ केवल अयोध्या चलाते थे, अवध उनका राज्य था। वहाँ उनका कानून था, टकसाल थी, सेना थी, सब कुछ उनका था। वे उतने के राजा थे, बाकी से उनको कोई मतलब नहीं था। बाकी के वे राजा नहीं, सम्राट् थे। वहाँ वे शासन नहीं करते थे, केवल अयोध्या में शासन करते थे। किन्तु बाकी सब लोग अयोध्या को अपना चक्रवर्ती मानते थे।

अब यह क्षेत्रवाद ही तो है। क्षेत्रवाद में सबसे बड़ी चीज क्या होती है? प्रतिभा की जागृति। अगर तुम मुझे स्वतंत्र रूप से चलने दोगे तो मैं अपनी पूरी योग्यता का प्रतिपादन करूँगा, लेकिन मुझे दबाकर रखोगे और बोलोगे, देख बेटा, तू ऐसे ही कर, तब तो मैं तुम्हारे साँचे में ढल जाऊँगा, अपनी प्रतिभा जागृत नहीं कर सकता। क्षेत्र को अपनी प्रतिभा जागृत करनी चाहिए और उस प्रतिभा को जागृत करने के लिए उस क्षेत्र को पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए। हाँ, जहाँ तक राष्ट्रीय सुरक्षा का सवाल है, उसे चक्रवर्ती पर छोड़ देना चाहिए, भारत सरकार पर छोड़ देना चाहिए। वहाँ तक मैं तुम्हारे साथ हूँ, मगर जहाँ तक क्षेत्रीय विकास का सवाल है, केन्द्रीय शासन से क्षेत्र का पूर्ण विकास नहीं हो पाता। यह सिद्धांत केवल देश और राज्य के स्तर पर ही नहीं, छोटी-मोटी संस्थाओं के स्तर पर भी वैध है। हम अपनी ही बात बोलते हैं। हमने इतनी उन्नति क्यों की? इसलिए कि हमने सब आश्रमों को स्वतंत्र किया हुआ है। कोई मेरे अधीन नहीं है। स्वीडन का आश्रम वहाँ का स्वामी चलाता है, दूसरी जगह का कोई और चलाता है। वहाँ कितना पैसा आता है, क्या करते हैं, उससे मेरे को कोई मतलब नहीं है। फेल हो गए तो तुम फेल हो गए, हमको उससे क्या मतलब?

हर क्षेत्र की अपनी विशेष प्रतिभा होती है। तमिलनाडु के लोग अपनी प्रतिभा रखते हैं, आन्ध्रप्रदेश के लोगों की अपनी अलग प्रतिभा है, बंगालियों, राजस्थानियों, मैथिलियों, भोजपुरियों, पंजाबियों, गुजरातियों सबकी अपनी प्रतिभा है। घर-परिवार को ही देख लो। किसी बाप में यह क्षमता नहीं होती कि अपने चारों बेटों को प्रतिभावान् बना सके। बाप के लिए यही तरीका है कि 'बेटा अब तुम अपनी प्रतिभा का विकास खुद करो। मैं तुमको आशीर्वाद देता हूँ, मेरे से जो मदद होगी माँग लेना, मगर अब तुम अपने रास्ते चलो।' उसमें एक बेटा वैज्ञानिक निकल जाएगा, एक बेटा बहुत बड़ा प्रशासक बन जाएगा, एक बेटा उद्योगपति निकल जाएगा। जिस तरह से हम अपने बच्चों

को पूर्ण स्वतंत्रता देने के लिए कहते हैं, उसी तरह से क्षेत्र हमारे बच्चे हैं, और क्षेत्रीय स्वतंत्रता भारत की उन्नति के लिए आवश्यक है। जो भी देश उन्नति करना चाहता है, उसे अपने क्षेत्रों को स्वतंत्रता देनी चाहिए। केवल सुरक्षा के मामले में उन सबको एक जगह पर रहना चाहिए। जब कभी युद्ध होता था, उनसे परामर्श लिया जाता था, तब सब लोग इकट्ठा होकर उसका सामना करते थे। यह बात स्पष्ट है कि जब तक भारत में क्षेत्रीय स्वतंत्रता थी, भारत संसार पर राज करता था। अन्न की उत्पत्ति होती थी, सोने की उत्पत्ति होती थी। *गायन्ति देवा किल गीतकानि, धन्यास्तु ते भारत-भूमि-भागे* – देवता लोग भी गाते थे कि हे भारत भूमि, तुम धन्य हो!

गड़बड़ कब हुई? मैं तुमको बतलाता हूँ। इतिहास में चन्द्रगुप्त के समय ऐसी परिस्थिति आ गई थी कि उसने सबको एक संघ में मिलाना शुरू कर दिया। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त की मदद से अखण्ड भारत को पुनः परिभाषित किया। धीरे-धीरे चन्द्रगुप्त सबको मिलाता गया। फिर उसका पोता आया अशोक, जो दक्षिण के एक छोटे से भाग के अलावा पूरे देश का शासक बन गया। उसके बाद वह गड़बड़ को संभाल नहीं सका। चन्द्रगुप्त तो भागकर कर्नाटक में जैन साधु बन गया था और अशोक ने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। उसने तो इतनी बड़ी गलती की जो हिंदुस्तान में कभी नहीं हुई थी। राष्ट्र या सरकार का कोई धर्म नहीं होता। सरकार हमेशा धर्म-निरपेक्ष ही रहनी चाहिए। किसी धर्म के साथ उसका कोई पक्षपात नहीं होना चाहिए। न्यायपालिका का, संसद का, प्रशासन का धर्म के साथ कोई सम्बंध नहीं होना चाहिए। अशोक ने बौद्ध धर्म को राष्ट्र-धर्म स्वीकार किया। उसके बाद मुगल आये, उन्होंने भी इसी परम्परा को जारी रखा।

अशोक के बौद्ध धर्म में जाने की वजह राजनैतिक थी, क्योंकि कलिंग में भयंकर नरसंहार हुआ था, लाखों लोग मरे। मतलब लाखों घर बर्बाद हुए, लाखों औरतें विधवा हुईं, लाखों बच्चे अनाथ हुए। अर्थव्यवस्था पर असर पड़ा, राजनैतिक चिंतन पर भी इसका असर पड़ा होगा। आखिर अशोक की राजनैतिक परिषद् भी थी। तब जाकर अशोक को अहिंसा का मार्ग स्वीकार करना पड़ा। वह खुद संभाल नहीं सका। उसके पास कोई विकल्प नहीं था। बौद्ध धर्म को स्वीकारना अशोक का राजनैतिक निर्णय था, व्यक्तिगत निर्णय नहीं। राजनैतिक और व्यक्तिगत निर्णय में अंतर होता है। *क्रमशः*

– 25 मार्च 1998, रिखियापीठ

प्रसन्नता और जप से जीवन में निखार

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

यौगिक जीवनशैली में हम नये संस्कारों को उत्पन्न करने का प्रयास करते हैं, और यम-नियम इसमें हमारी सहायता करते हैं। संस्कार का तात्पर्य ऐसी आदत या मनोवस्था से है जो विचारों में परिवर्तन लाती है, जिससे व्यवहार और कर्म के प्रति सजगता उत्पन्न होती है। इस संस्कार को उत्पन्न करने के लिए, जीवन में इस सकारात्मक परिवर्तन को लाने के लिए पहला सूत्र है सजगता।

क्या आप सजग हैं, मुख्य प्रश्न यही है। इसका उत्तर है, आप सजग नहीं हैं। आप सिर्फ आत्म-केंद्रित प्रेरणाओं, इच्छाओं, विचारों, अपेक्षाओं और भावनाओं के प्रति सजग हैं। इसके परे आप किसी चीज के प्रति सजग नहीं हैं, आप दूसरे व्यक्ति की भावनाओं या स्थिति के प्रति भी सजग नहीं हैं। आपकी सजगता आपकी अपनी अपेक्षाओं, आवश्यकताओं और इच्छाओं के चारों ओर घूमती रहती है। यदि कोई चीज इस श्रेणी में नहीं आती तो आप उसके प्रति सजग भी नहीं होते। न तो वह आपकी प्राथमिकता होती है, न ही आपके मन में रहती है। इसलिए संस्कारों का सृजन और विकास करने के लिये सजगता प्रथम सूत्र है। यह सजगता जीवन के तीन पक्षों से जुड़ी है – इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति।

इच्छा, ज्ञान और क्रिया में सामंजस्य

इच्छायें सब में होती हैं, चाहे वह त्यागी हो या संसार में लिप्त गृहस्थ। इच्छा को एषणा भी कहते हैं और ये कई तरह की होती हैं – पुत्रैषणा अर्थात् संतान की इच्छा, वित्तैषणा अर्थात् धन-सम्पत्ति की इच्छा, तथा लोकैषणा अर्थात् नाम और यश की इच्छा। इच्छा मन का एक स्वभाव है, जिसे इच्छा शक्ति नियंत्रित करती है। इच्छा शक्ति के कारण ही आप भौतिक संसार से जुड़े रहते हैं। इच्छा शक्ति के कारण ही आपकी क्रियाएँ, अनुभूतियाँ और आवश्यकताएँ सांसारिक हैं। इसलिए इन्द्रिय विषयों के माध्यम से आप मानसिक और भावनात्मक संतुष्टि चाहते हैं।

जीवन का दूसरा पक्ष ज्ञान है। इसके दो स्वरूप हैं – बौद्धिक और प्रयोगात्मक। आपको कई चीजों का ज्ञान है, लेकिन आपने अब तक उनका

प्रयोग जीवन में नहीं किया है। उस ज्ञान का फिर क्या महत्त्व? आपने कई विचारधाराओं, कई सिद्धांतों का अध्ययन किया है, उन्हें उपयोगी भी माना है, परंतु जब उन्हें जीवन में उतारने का समय आया तो वे कहाँ चले गये? आप उन विचारों को क्यों नहीं जीते हैं जिन्हें आपने उपयोगी माना है और चाहा है? यह इस बात का संकेत है कि ज्ञान मात्र बौद्धिक व्यायाम बनकर रह गया है, और व्यावहारिक, विवेकपूर्ण ज्ञान नहीं बना है।

मानव मन प्लास्टिक के समान है, यह बदल नहीं सकता। हालाँकि आपको उसे बदलने की इच्छा होती है, लेकिन यह परिवर्तन स्वाभाविक या सहज रूप से नहीं आता। जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिये आपको स्वयं से संघर्ष करना होगा। सांसारिक आदतों और प्रभावों के कारण मन प्लास्टिक के समान कड़ा हो जाता है। प्लास्टिक को पानी में कई सप्ताह तक डुबा दीजिये और फिर बाहर निकालिये। आप देखेंगे कि प्लास्टिक सूखा है। पानी का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। लकड़ी जैसी किसी अन्य वस्तु को भिगोइये, वह पानी सोख लेगी। मन लकड़ी की तरह नहीं, बल्कि प्लास्टिक की तरह कठोर होता है। आप परिवर्तन चाहते हैं, लेकिन बिना आलोचना या विरोध किए उसे स्वीकार भी नहीं करते। आप उसी नकारात्मक विचार के चारों तरफ घूमते रहते हैं। आप ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग नहीं कर पाते।

उसी प्रकार नैतिकता, सदाचार और आध्यात्मिकता केवल बौद्धिक स्तर तक सीमित रहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि उसे आत्म-साक्षात्कार का अच्छा अनुभव हो, लेकिन कोई भी जीवन की चुनौतियों का सामना नहीं करना चाहता। इस प्रकार यहाँ व्यावहारिक ज्ञान की कमी है। ज्ञान के अभाव

में इच्छा क्रिया को प्रभावित कर देती है, और इससे पूर्ण संतोष भी प्राप्त नहीं होता। इसलिये इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति में सामंजस्य होना चाहिये और यही सामंजस्य संस्कार कहलाता है।

जब आप ज्ञान को आत्मसात् कर लेते हैं और वह आपका हिस्सा बन जाता है, तब यह एक व्यवहार, एक दृष्टिकोण, एक समझ में परिवर्तित हो जाता है। यह आपके काम करने के तरीके और कौशल को बदल देता है। इसलिये ज्ञान को एक योग के रूप में जाना गया है। यह ऐसा योग नहीं जहाँ आप अपनी बुद्धि में किताबी ज्ञान ठूँस-ठूँस कर भरते हैं पर जिसका उपयोग आप जीवन में कभी नहीं करते, बल्कि इसमें स्वयं को सुधारने की सही पद्धति पर आत्म-चिंतन करके उसे जीवन में उतारा जाता है। ज्ञान केवल इसी कारण से एक योग है – आपको ज्ञान को समझना है, उस पर चिंतन करना है, उसका विश्लेषण करना है, उसे जीवन में उतारकर अभिव्यक्त करना है।

सांसारिक अधिकार और आध्यात्मिक अनुशासन

इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति का प्रभाव सांसारिक और आध्यात्मिक, दोनों तरह के जीवन पर पड़ता है। सांसारिक जीवन में इन तीनों शक्तियों का प्रयोग आपके अधिकार, शक्ति और स्वतंत्रता को प्रकट करने के लिये होता है, जबकि आध्यात्मिक जीवन में ये ऐसे साधन हैं जो मन को शिक्षित और अनुशासित करते हैं।

आप सांसारिक जीवन में अपने 'मानव अधिकार' पाना चाहते हैं, लेकिन अनुशासित जीवन नहीं जीना चाहते। आप समझते हैं कि अनुशासन 'मानव अधिकार' के विरुद्ध है और आपकी स्वतंत्रता पर एक अंकुश है। अनुशासन को हमेशा नकारात्मक दृष्टि से देखा जाता है क्योंकि यह स्वार्थपूर्ण इच्छाओं, आवश्यकताओं और पद-प्रतिष्ठा पाने की चाह का विरोधी होता है। सांसारिक जीवन की हर क्रिया के द्वारा आप स्वेच्छाचारी व्यवहार का अधिकार पाना चाहते हैं। आध्यात्मिक जीवन में ऐसे कोई 'मानव अधिकार' नहीं होते, यहाँ आप अपने को व्यक्त करने के लिये एक स्वार्थपूर्ण तरीका नहीं, बल्कि एक प्रशिक्षित, संतुलित, नियंत्रित और अनुशासित तरीका खोजते हैं।

आध्यात्मिक जीवन अनुशासनों से बना है, जबकि सांसारिक जीवन हर प्रकार के अनुशासन को अस्वीकार करता है। आश्रमों में भी यही होता है। संन्यासी भी यह नहीं समझ पाते कि जीवन कैसा और किस प्रकार का होना

चाहिये। आखिर वे भी उसी समाज से आये हैं जहाँ से आप, वे स्वर्ग से तो नहीं टपके। इसलिये संन्यासियों में भी संन्यास के लक्षण नहीं दिखते। न तो वे हर परिस्थिति में सामंजस्य और संतुलन रख पाते हैं, न ही उनमें समर्पण होता है। वे उसे समझने और व्यवहार में लाने में असमर्थ हैं। यही वास्तविकता है।

आध्यात्मिक जीवन यम-नियम से आरम्भ होता है

लोग आध्यात्मिक जीवन के सारतत्त्व को नहीं समझ पाते, बल्कि अपनी इच्छाओं, आवश्यकताओं, आशाओं, पद-प्रतिष्ठा की लालसाओं और स्वतंत्रता की विचारधाराओं के अनुसार उसे ढालने का प्रयास करते हैं। जब ये शक्तियाँ प्रबल होती हैं तब दूसरों के प्रति न तो कोई सहयोग होता है, न ही कोई सहारा, सहानुभूति, सम्बंध या प्रेम। सभी अपने व्यक्तित्व के नकारात्मक पक्ष के अनुसार जीते हैं।

यहीं पर आपकी शिक्षा में त्रुटि उत्पन्न हो जाती है। आप सोचते हो कि आसन-प्राणायाम का अभ्यास, जो योग का मात्र शारीरिक पक्ष है, आपको एक अलग मनोवस्था की ओर ले जायेगा। यह कभी नहीं हो सकता। आप समझते हैं कि ध्यान और मंत्र से मन बेहतर बनेगा, यह नहीं हो सकता। जब तक आप अपने मन में थोड़ा-सा परिवर्तन नहीं लाते, जीवन में तालमेल नहीं बैठाते, तब तक आप अपने जीवन में बदलाव नहीं ला सकते। यह तालमेल यम और नियम के द्वारा लाया जा सकता है।

पातंजल योग के यम-नियम के अलावा अन्य भी हैं। जीवन से सम्बन्ध रखने वाले यम-नियमों में पहला यम है प्रसन्नता और पहला नियम है जप।

प्रसन्नता – पहला यौगिक यम

हजारों वर्ष पहले, माता पार्वती ने अपने पति और गुरु, भगवान शिव से पूछा, 'इस सृष्टि में, इस संसार और प्रकृति में हर चीज नश्वर है। कुछ भी स्थायी नहीं है। यहाँ बहुत दुःख-दर्द, बहुत चिंता और कुंठा है। इसके लिये क्या करना चाहिये?' शिवजी ने कहा, 'ऐसी बहुत-सी विधियाँ और अभ्यास हैं जिनके द्वारा इन दुःख-दर्दों से उभरा जा सकता है, दुःखों के कारणों को पहचान कर उन्हें दूर किया जा सकता है। लेकिन दुःख-तकलीफ को नियंत्रित करने का सबसे अच्छा तरीका प्रसन्नता है। इसलिये हमेशा प्रसन्न रहो।' इस तरह प्रसन्नता प्रथम यम हुआ।

मन की कोई भी नकारात्मक स्थिति प्रसन्नता, मुस्कान और हँसी के द्वारा नियंत्रित की जा सकती है। अवसाद भी प्रसन्नता से दूर किया जा सकता है। आप सोच रहे होंगे, 'अगर मैं दुःखी हूँ, कष्ट और अवसाद में हूँ, तब मैं कैसे प्रसन्न रह सकता हूँ?' जी हाँ, आप प्रसन्न रह सकते हैं, क्योंकि प्रसन्नता आपकी स्वाभाविक अवस्था है। अगर आप सोचते हैं कि प्रसन्नता के लिए कोई कारण आवश्यक है या कठिन परिस्थिति में आप प्रसन्न नहीं रह सकते तो यह प्रसन्नता की बहुत सीमित समझ है।

बच्चों को देखकर आप इस सिद्धांत को आसानी से समझ सकते हैं। वे रोते भी हैं, गुस्सा भी होते हैं, वे यह नहीं खाना चाहते वो नहीं खाना चाहते, लेकिन यह स्थिति ज्यादा देर नहीं रहती। तुरंत ही वे सहजता से हँसने लगते हैं; उनकी प्रसन्नता के लिए बाह्य परिस्थितियाँ कोई विशेष महत्त्व नहीं रखतीं। बच्चों की हँसी के बारे में जरा सोचिये। वह इतनी मधुर क्यों लगती है? इसलिए कि वह स्वाभाविक होती है, वह किसी परिस्थिति या चुटकुले के कारण नहीं होती।

जिस प्रसन्नता को बच्चे सहजता से अभिव्यक्त करते हैं, वह आपका भी अंग बनी रहती है, लेकिन जब आप बड़े हो जाते हैं तो इसे भूल जाते हैं। बचपन ढल जाने के बाद चिड़चिड़ापन आ जाता है। यह हॉर्मोन के कारण भी हो सकता है, पर यही वह समय है जब आप जीवन में दूसरी दिशा की

ओर बढ़ने लगते हैं। आपकी सजगता बाहरी परिस्थितियों से जुड़ती जाती है, और आप उनसे ठोकरें खाते रहते हैं। आध्यात्मिक होने के लिये आपको उसी स्वाभाविक स्थिति में जाना होगा जिसमें आप अकारण प्रसन्न रहते थे। आपको उसी से जुड़ना, उसी को अनुभव और अभिव्यक्त करना सीखना है।

जब तक आप प्रसन्न होने के लिए किसी कारण पर निर्भर रहेंगे, तब तक उस कारण की अनुपस्थिति आपको अप्रसन्न करती रहेगी। मान लीजिये, आपने आज बहुत अच्छा कीर्तन गाया, सभी ने प्रशंसा की, आप बहुत प्रसन्न हुए। अगले दिन आप अच्छा नहीं गा सके, किसी दूसरे ने ज्यादा अच्छा गाया, सबने उसकी प्रशंसा की। आप उदास और अप्रसन्न हो गये। अगर प्रसन्न रहने के लिये आप बाहरी परिस्थितियों पर निर्भर रहेंगे तो हमेशा प्रसन्नता और अप्रसन्नता के बीच झूलते रहेंगे। यही संसार है। संस्कार विकसित करने के लिए, द्वंद्वों के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए, योगी बनने के लिए, आपको अपने भीतर की सकारात्मकता से जुड़ना होगा जो बिना किसी बाहरी कारण के सदा विद्यमान रहती है।

अगर आप प्रसन्नता के उस स्वाभाविक अनुभव में सजगतापूर्वक प्रवेश करना सीख जाते हैं तो आप अपनी मनोदशा, मन का व्यवहार, आदतों, चरित्र और पूरे व्यक्तित्त्व को बदल पाने में सक्षम होंगे। आपकी चिंता, तनाव, अवसाद और कुंठा समाप्त हो जायेगी।

यही 'निरंजन चुनौती' है। जागते समय आप बारह घंटे प्रसन्न रहें। यदि आप ऐसा कर सकते हैं तो मैं आपकी डायरी में लिख दूँगा कि आपने जीवन में शांति प्राप्त कर ली है। यदि आप ऐसा नहीं कर सकते तो आपको बार-बार लौटकर आना होगा, न केवल आश्रम में, बल्कि इस जीवन में भी, जब तक आप शांति नहीं प्राप्त कर लेते।

जप – प्रथम यौगिक नियम

जप का अर्थ है दोहराना। सामान्य रूप से आप पूरे समय इंद्रियों और इंद्रिय-विषयों से जुड़े रहते हैं। जप वह विधि है जिसमें आप अपने मन को इन विषयों से थोड़े समय के लिये अलग कर दूसरे किसी तत्त्व से जोड़ सकते हैं। इंद्रियों और इंद्रिय-विषयों से आपके मन का सम्बन्ध टूट जाता है और विराम के इन क्षणों में आप अपनी सजगता को अपने आंतरिक स्वभाव के अन्वेषण में लगाते हैं जहाँ आपको शांति मिलती है।

जब तक आप संसार से जुड़े हैं, तब तक संघर्ष, विक्षेप और व्याकुलता बनी रहेगी, लेकिन जब आप अपने-आप से जुड़ते हैं तो अनायास ही प्रसन्नता और शांति का अनुभव करते हैं। जब भी आप मंत्र जप करेंगे, आपकी मनोदशा पहले से बेहतर हो जाएगी। हालाँकि आप सोच सकते हैं, 'हे भगवान, मुझे मंत्र की एक माला जपने के लिये बैठना होगा,' और स्वयं को पूर्ण रूप से मंत्र जप में नहीं लगाते, फिर भी आपको शांति का आंशिक अनुभव तो होता ही है। इस प्रकार, जप वह नियम है जो आपको स्वेच्छा से जुड़ने और अलग होने का सामर्थ्य देता है। जब आप बाहरी संसार से अलग होते हैं, तो यह आपको एक व्यक्तिगत अनुभव पर ध्यान देने की क्षमता देता है। जब आप उस आंतरिक व्यक्तिगत अनुभव से जुड़ जाते हैं तो शांति और आनन्द का अनुभव करते हैं।

जप मन में एक विशेष अवस्था भी उत्पन्न करता है – स्मरण की। यह आपको किसी चीज का स्मरण कराता है। अपने पुराने दुःख-दर्दों को याद करना आसान है, क्योंकि मन में उनकी छाप रहती है। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, वह स्मृति पृष्ठभूमि में चली जाती है, पर रहती अवश्य है। दस, बीस, चालीस या अस्सी वर्षों की स्मृतियाँ भी वहीं जमी हुई रहती हैं। यहाँ तक कि मृत्यु के क्षण भी वे स्मृतियाँ रहती हैं। जप आपको अपने आंतरिक सम्बन्ध, अपने शांति और संतोष के अनुभव का स्मरण कराता है। इस स्मरण के कारण जप आपको चेतना के एक अलग क्षेत्र में ले जाता है जहाँ आप प्रसन्नता, उल्लास और संतोष का अनुभव करते हैं।

जिस क्षण आप बाहर आ जाते हैं और जीवन का पुनः सामना करते हैं, आप उस शांतिपूर्ण अवस्था से अलग हो जाते हैं और विक्षेप की अवस्था से जुड़ जाते हैं, लेकिन जप ने आपके मन को तनाव और चिंता में उलझने से थोड़ी देर के लिए तो जरूर बचाया। कल्पना कीजिये कि गर्मी का दिन है, तापमान बहुत बढ़ा हुआ है, आप एक वातानुकूलित कमरे के सामने से जा रहे हैं और आपको ठंढी हवा का झोंका लगता है। वह क्षणिक झोंका आपको तपती गर्मी से राहत देता है और आप कह उठते हैं, 'आह, कितना अच्छा है।' जप से भी कुछ ऐसा ही अनुभव होता है। संसार की गर्म हवाओं के झोंकों में, जप आपको शांति और प्रसन्नता की शीतलता प्रदान करता है। इस प्रकार जप जीवन का पहला नियम है और प्रसन्नता जीवन का पहला यम।

– 18 जुलाई 2015, गंगा दर्शन

मन को संभालो

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

मनुष्य आज बीमार है, क्योंकि वह सोचता है कि वह बीमार है। हमलोगों की विभिन्न बीमारियों के वास्तविक बीज हमारे अपने नकारात्मक और सीमित विचार हैं। जो व्यक्ति ऐसे विचारों को न स्वीकार करते हैं, न मन में पनपने देते हैं, उनके जीवन में बीमारी और रोग का कोई स्थान नहीं। हमलोग इस विचार से सम्मोहित हैं कि रोग और बीमारी हमारी नियति है, जबकि सच्चाई यह है कि स्वास्थ्य और आनन्द हमारा जन्मसिद्ध अधिकार और धरोहर है। इस सामूहिक सम्मोहन से उबरने के लिए तथा जीवन में स्वास्थ्य, आनन्द और संतोष का अनुभव करने के लिए हमलोगों को अपने दैनिक जीवन में योग का सुव्यवस्थित उपयोग अवश्य करना चाहिए।

आज जब हमलोग इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर रहे हैं, हम अपनी आध्यात्मिक धरोहर को पुन: प्राप्त कर रहे हैं जिसका योग एक महत्त्वपूर्ण अंश है। हालाँकि योग का उच्चतम लक्ष्य आध्यात्मिक है, लेकिन इसके अभ्यास प्रत्येक मनुष्य को प्रत्यक्ष लाभ देते हैं, चाहे उनके जीवन का लक्ष्य जो भी हो। एक ऐसे समय जब संसार चौराहे पर खड़ा है, जहाँ पुराने मूल्यों को अस्वीकार कर दिया गया है, पर नये मूल्यों की स्थापना नहीं हो पाई है, योग लोगों के लिए ऐसे अनेक साधन उपलब्ध करा रहा है जिससे वे अपनी अंतरात्मा से सम्बंध जोड़ सकें। इस सम्बंध के द्वारा वर्त्तमान युग में मनुष्य के लिए सामंजस्य, संवेदना और करुणा अभिव्यक्त कर पाना संभव हो पाएगा।

इस परिप्रेक्ष्य में योग मात्र शारीरिक व्यायाम से कहीं आगे है, बल्कि यह एक नयी जीवन शैली स्थापित करने में सहायक है जो जीवन के आन्तरिक और बाह्य, दोनों आयामों को अंगीकार करती है।

वर्तमान सदी में हमलोग दिनभर बहिर्मुखी रहते हैं। हमें भीतर झांकने का समय ही नहीं मिलता, जबकि यह अत्यंत आवश्यक है। व्यस्त रहते हुए भी हमलोग अगर अपने शरीर की देखभाल के लिए समय निकाल ही लेते हैं, तो क्या प्रतिदिन चंद मिनटों के लिए अपनी अन्तरात्मा का ख्याल नहीं कर सकते? यदि भौतिक शरीर शौच, स्नान, भोजन और वस्त्र चाहता है तो क्या आपकी मानसिक काया को भी कुछ आवश्यकता नहीं है? आपका मन बिना

किसी विश्राम के जीवन के तनावों और दबावों का सामना करता है। उसे भी समुचित देखभाल की आवश्यकता है। आखिर मशीनों को भी तो नियत घण्टों के बाद विश्राम दिया जाता है।

हमलोगों की त्रासदी यही है कि मानव शरीर रूपी यह आश्चर्यजनक यंत्र प्राप्त होने पर भी हम इसकी कद्र नहीं करते। हमलोग सोचते हैं कि जब तक यह यंत्र निर्विघ्न चलता है तब तक इसकी मशीनरी की देखभाल हमारा दायित्व नहीं है। लेकिन जीवन के क्रम में मानव व्यक्तित्व की त्रुटियाँ बढ़ती ही जाती हैं। इन त्रुटियों का सुधार तभी किया जा सकता है जब व्यक्ति अपनी मानसिक संरचना को समझने का बीड़ा उठाए। विश्रांति और ऊर्जा प्रदान करने वाली यौगिक विधियाँ से तंत्रिकाओं पर पड़ते जा रहे दुष्प्रभावों को हल्का किया जा सकता है। मन में एकत्र विचारों के कचरे को योग की प्रक्रिया द्वारा साफ किया जा सकता है।

योग एक वैज्ञानिक प्रणाली है जिसके द्वारा मानव अपनी चेतना का रूपान्तरण करने में सक्षम है। वही मन जो दु:ख झेलता है, आनन्द का अनुभव करने में भी सक्षम है। सुख और दु:ख मानव मन की अलग-अलग अवस्थाओं की अभिव्यक्तियाँ हैं। दु:ख से संघर्ष करने, छाया को लात मारने के बदले क्यों न हम प्रकाश को ले आयें? जब तक आप मन को संभालने के योग्य नहीं हैं, आप ईश्वर के अनुभव को भी संभाल नहीं सकते।

भारत के ऋषि-मुनियों ने मन और जीवन के सम्बन्ध को अच्छी तरह समझ लिया था। जीवन मन को प्रभावित करता है और मन जीवन को। नि:संदेह आप जीवन को नियंत्रित नहीं कर सकते, लेकिन योग और ध्यान की सहायता से आप मन को अवश्य संभाल सकते हैं। यदि आप ऐसा कर लेते हैं तो आप वास्तव में योगी हैं।

मन से मित्रवत् व्यवहार करो

मन आपके नियंत्रण में है तो आपका मित्र है, पर यदि वह नियंत्रण में नहीं है, तो आपका सबसे बड़ा शत्रु है। मन बन्धन और मोक्ष, दोनों का कारण है। मन तबाही मचाता है, बहाने बनाता है और अनेक बाधायें खड़ी करता है। आपको मन के साथ समझदारी से निपटना होगा। मन को उसकी समग्रता में जानना चाहिए जिसके अंतर्गत वृत्तियाँ, संकल्प, भावनाएँ, कामनाएँ, मूल प्रवृत्तियाँ और कर्म, ये सब आते हैं। यदि आप मन की प्रकृति को बदलना चाहते हैं तो आपको उसका सम्पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। एक बार आप मन को जान लेते हैं तो आप समझ जायेंगे कि उसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, क्योंकि मन आपका शत्रु नहीं, आपका सबसे अच्छा मित्र है। जैसे एक बेकाबू घोड़ा गाड़ी को उलट देगा, वैसे ही मन आपका शत्रु तब होगा जब वह नियंत्रण से बाहर हो जाएगा।

आप अपने काम, क्रोध और ईर्ष्या-द्वेष को काबू में करने का प्रयास करते रहे हैं, लेकिन कुछ होता नहीं, क्योंकि आप मन के साथ नहीं, मन की वृत्तियों के साथ निबटते रहे हैं। आप साधु-संतों से सुनते आ रहे हैं कि अपने मन को बदलना चाहिए, पर जब भी आपने मन को बदलने का प्रयास किया है, हर बार असफल ही हुए हैं, क्योंकि आप मन के व्यवहार को बदलने की कोशिश करते रहे हैं, मन के स्वभाव को नहीं। मन को जानने के लिए आपको यौगिक ध्यान के पथ पर चलना होगा। मन की सीमाओं के परे जाने का प्रयास स्वयं ही योग की एक अभिव्यक्ति है।

बाईबल में कहा गया है, 'बालवत् बनो।' इसका अभिप्राय है विचारों और कामनाओं से रहित होना, मन के सभी बंधनों से मुक्त होना। जीवन में चाहे हर्ष हो या विषाद, मृत्यु हो या जन्म, लाभ हो या हानि, विजय हो या पराजय, यह सब एक लीला है, एक खेल है, वास्तविकता नहीं है। उन्मुक्त मन के साथ आप ऐसी बालवत् सजगता हर समय रख सकते हैं।

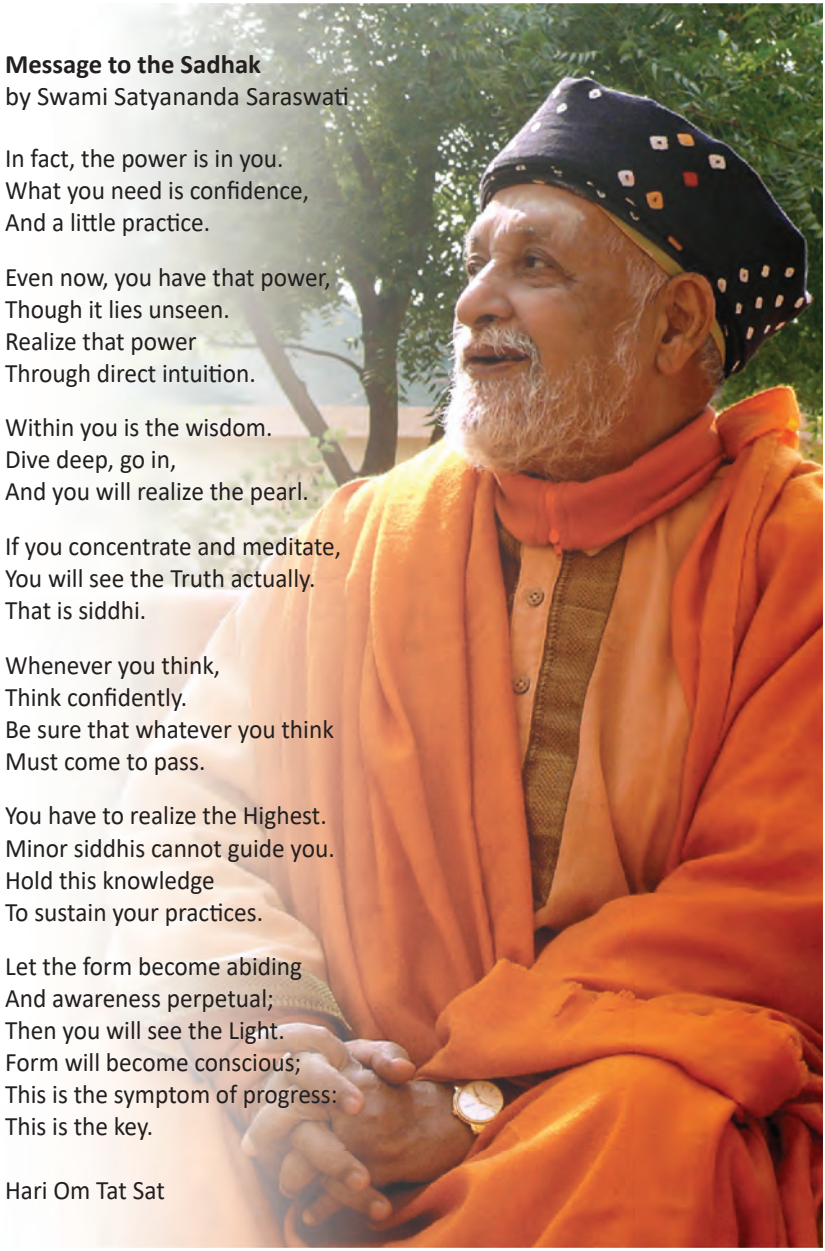

Message to the Sadhak
by Swami Satyananda Saraswati

In fact, the power is in you.
What you need is confidence,
And a little practice.

Even now, you have that power,
Though it lies unseen.
Realize that power
Through direct intuition.

Within you is the wisdom.
Dive deep, go in,
And you will realize the pearl.

If you concentrate and meditate,
You will see the Truth actually.
That is siddhi.

Whenever you think,
Think confidently.
Be sure that whatever you think
Must come to pass.

You have to realize the Highest.
Minor siddhis cannot guide you.
Hold this knowledge
To sustain your practices.

Let the form become abiding
And awareness perpetual;
Then you will see the Light.
Form will become conscious;
This is the symptom of progress:
This is the key.

Hari Om Tat Sat

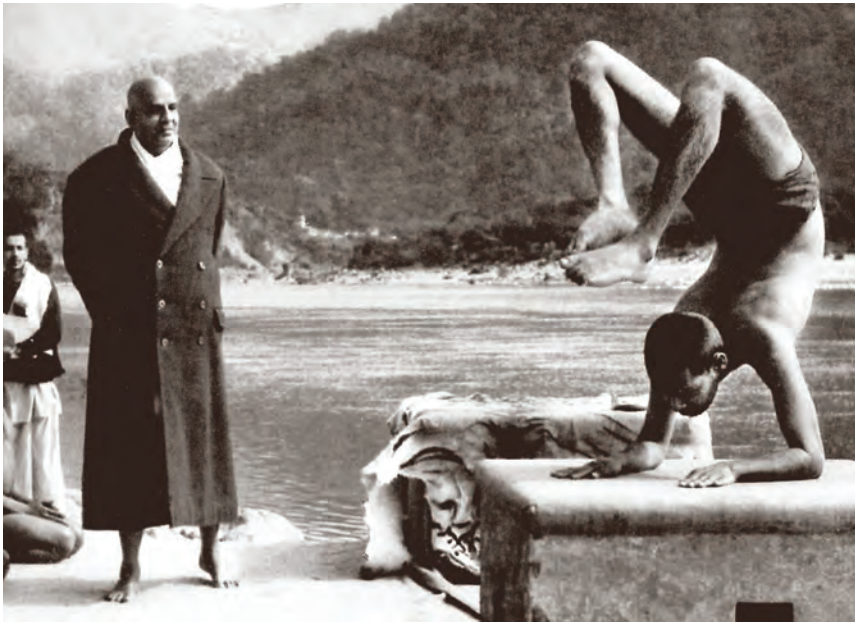

मन को मुक्त बनाने की व्याख्या करना कठिन है। मन सदा शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक या अन्य गहन स्तरों पर व्यस्त रहता है और आप प्रायः नहीं जानते कि किसने आपके मन को पकड़ रखा है। जब मन इन सम्बंधों और सीमाओं से मुक्त होता है तब यह एक शक्तिशाली तत्त्व के रूप में अभिव्यक्त होता है। अपनी सीमाओं का अतिक्रमण करने के लिए मन आपके हाथों में एक प्रभावशाली साधन है। अगर आप अपने मन के स्वभाव को नहीं बदल सकते तो आप कभी आनंद और प्रसन्नता का अनुभव नहीं कर सकेंगे। प्रसन्नता संसार का नहीं, आपके मन का गुण है।

अपने मन को संभालने, अपनी प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित करने, अपने विचार-व्यवहार के प्रति सजग होने के लिए योग में अनेक साधन और विधियाँ हैं। अन्ततः हमें जीवन में सन्तुलन और सामंजस्य प्राप्त करने की कला सीखने की आवश्यकता है।

अन्तर्मौन

अन्तर्मौन का शाब्दिक अर्थ है आन्तरिक शांति। दैनिक जीवन में हमारा मन निरन्तर बहिर्मुखी रहता है। हम प्रायः अपने बाहर की घटनाओं को ही देखते और सुनते हैं, अपने आन्तरिक वातावरण में हो रही गतिविधियों की जानकारी और समझ न्यूनतम रहती है। इसे उलटने के लिए ही अन्तर्मौन की विधि की परिकल्पना की गई है, ताकि हमलोग कम-से-कम थोड़ी अवधि के लिए अपनी मानसिक गतिविधियों को देख सकें और उन्हें समझ सकें। वास्तव में अन्तर्मौन ऐसी कुछ 'स्थायी साधनाओं' में एक है जिसका अभ्यास एक निष्ठावान् साधक दिन के चौबीस घण्टे सहज रूप से कर सकता है। अपने आन्तरिक वातावरण, विचारों, भावनात्मक प्रतिक्रियाओं इत्यादि की सजगता बनाये रखने से हम अपने व्यक्तिगत विकास को उच्चतम अवस्था तक ले जा सकते हैं। यह अभ्यास हमें अपने मन के साथ-साथ दूसरों के मानसिक व्यवहारों को भी समझने की क्षमता देगा।

अन्तर्मौन हमें मन की प्रक्रियाओं और उन्हें अपने नियंत्रण में लाने के उपायों की जानकारी देता है। अन्तर्मौन का अभ्यास किसी भी समय इस प्रश्न पर चिंतन के साथ किया जा सकता है कि 'मैं क्या सोच रहा हूँ? मेरे मानसिक क्षेत्र में अभी क्या घटित हो रहा है?' जब प्रतिदिन अनेक बार ऐसा अभ्यास किया जाता है तो यह साक्षी भावना एक स्वाभाविक प्रक्रिया बन जाती है

जो हमें दर्शाती रहती है कि हम कौन हैं, हम यहाँ क्या कर रहे हैं और हम कहाँ जा रहे हैं।

जप योग

सभी विधियों में मंत्र योग या जप योग की विधि सरलतम और उत्तम मानी जाती है। जप योग का अभ्यास किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी भी समय और किसी भी परिस्थिति में किया जा सकता है। जप का अर्थ है दुहराते जाना, और मंत्र का तात्पर्य ध्वनि स्पन्दनों के ऐसे समूह से है जिसका हमारी मानसिक एवं अतीन्द्रिय चेतना पर प्रभाव पड़ता है।

बहुत-से लोग अपना मंत्र जप यह कहकर छोड़ देते हैं कि 'जब मैं जप करता हूँ तो मेरे विचार अनियंत्रित हो जाते हैं। जब मैं मंत्र जप नहीं करता हूँ तो मेरा मन शान्त रहता है। इसलिए मैं मंत्र जप क्यों करूँ जब इससे मन उद्विग्न हो जाता है?' मंत्र एक उत्प्रेरक की तरह है जो हमारे कर्मों और संस्कारों को उद्दीप्त करके उनमें विस्फोट करा देता है। जैसे हम रेचनकारी पदार्थ लेकर अपने पेट की सफाई करते हैं, वैसे ही मंत्र के द्वारा हमारे सभी दबे हुए विचार और कुण्ठाएँ बाहर आना प्रारम्भ कर देते हैं। मंत्र जप की प्रारम्भिक अवस्था में हमें एकाग्रता की नहीं, बल्कि इस रेचन प्रक्रिया की अपेक्षा करनी चाहिए। अगर मन इस प्रक्रिया में सहयोग करता है तो बहुत अच्छा, पर यदि सहयोग

नहीं भी करता तो हमें बिल्कुल चिंता नहीं करनी चाहिए। मन को नियंत्रित करना बड़ा कठिन है। मनुष्य प्रत्येक चीज कर सकता है, लेकिन मन का नियंत्रण सबसे दुष्कर और संभवत: मनुष्य की उपलब्धियों में अन्तिम ही है।

निष्काम सेवा

आध्यात्मिक विकास का सरलतम उपाय है दूसरों के लिए जीना। यह मैं अपने अनुभव से कह रहा हूँ क्योंकि मैंने सब कुछ किया है। आध्यात्मिक जीवन का ऐसा कोई आयाम नहीं है जिसका मैंने अनुभव न किया हो, लेकिन मेरा मन तब खुला जब मैंने दूसरों के लिए जीना शुरू किया। जब तक मैं अपने लिए जी रहा था, मैं अंधा था, लेकिन जब मैंने ऐसे लोगों के बारे में सोचना प्रारम्भ किया जो बीमार, गरीब और बेघर हैं, तब मेरा आंतरिक विकास होने लगा।

दूसरों के लिए काम करना हमारे कर्मों और स्वास्थ्य को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। स्वार्थपरक प्रेम के बदले यदि निष्काम स्नेह हो तो कोई भावनात्मक विक्षेप नहीं होगा और अनासक्ति क विकास होगा। निष्काम भाव से दूसरों की सेवा करने से मनुष्य कर्म के बंधन में नहीं पड़ता। प्रत्येक कर्म का कुछ-न-कुछ फल होता है। केवल उन कर्मों का कोई फल नहीं होता जो निःस्वार्थ भाव से दूसरों के लिए किये जाते हैं।

मानव जाति जन्मजात स्वार्थी है, जबकि शेष सृष्टि नि:स्वार्थ है। वृक्ष फल देते हैं, नदी जल देती है, गाय दूध देती है और उसके मरने के बाद उसके चमड़े का उपयोग होता है। इसी प्रकार मनुष्य को दूसरों के लिए निष्काम कर्म करना चाहिए, अपनी सम्पदा, विद्या और शक्ति का दूसरों के हित के लिए उपयोग करना चाहिए। मानवता की सेवा करना और दीन-दु:खियों से प्रेम करना ही मनुष्य का धर्म है। हमें उनकी सहायता करनी चाहिए जो आध्यात्मिक जीवन की खोज में हैं, जो बीमार, गरीब और उपेक्षित हैं। स्वयं की अपेक्षा दूसरों के लिए काम करना अधिक सरल एवं उत्साहवर्धक है। मन उन्मुक्त और हृदय निर्मल हो जाता है। निष्काम कर्म मन पर साबुन की तरह काम करता है, यह कर्मों की धूल को साफ कर देता है। निष्काम सेवा करते समय मन व्यस्त रहता है, यह जल्दी ऊबता नहीं और इसके तनाव छूट जाते हैं। मनुष्य अपने मन पर नियंत्रण तब तक नहीं पा सकता जब तक वह दूसरों के शोक में सम्मिलित नहीं होता, उनके दु:ख को अपना नहीं समझता। मन पर विजय प्राप्त करना सरल नहीं है और मनुष्य को मन से संघर्ष भी नहीं करना चाहिए, क्योंकि

अन्त में हार उसी की होगी। मन को संभालने का एक ही उपाय है, उसे ऐसा समुचित काम देना जिसे वह पसन्द करता है। मानवता की सेवा करना, गरीबों की सहायता करना, भूखे को खिलाना, बीमार की सेवा करना, अनाथों की देखभाल करना, दूसरों की समस्या का पता लगाने द्वार-द्वार जाना और वहाँ जो भी सहायता आवश्यक हो उसे देना – मन यह सब काम पसन्द करता है।

साधक यदि चौबीसों घण्टे मन से हाथापाई और कुश्ती करता रहता है तो वह अपना समय ही नष्ट कर रहा है। मन के साथ इस द्वन्द्व युद्ध में कभी वह हावी होता है तो कभी मन, लेकिन किसी को भी निर्णायक विजय नहीं मिलती। मुकाबला बराबरी पर समाप्त होता है और शाम ढलते-ढलते साधक निढाल हो जाता है। वह सिरदर्द से कराहता है, और प्रशामक दवा की गोली लेता है या शराब की बोतल खोलता है। कुछ लोग विश्रान्ति के लिए मन्दिर या गिरजाघर जाते हैं, तो कुछ लोग अपने को तरोताजा करने डिस्को चले जाते हैं। कोई योगनिद्रा करने की सोचता है और टेप चला देता है। लेकिन कोई भी साधक किसी गरीब के घर जाकर दीप जलाने की नहीं सोचता।

निष्काम सेवा ही मन की आन्तरिक संरचना को बदलती है। जब आप असहाय मनुष्यों की पीड़ा को दूर करेंगे तो आपकी अपनी पीड़ा दूर होगी। यदि आप अपने मन को मित्र बनाना चाहते हैं तो सारे विश्व को अपना परिवार समझो और अधिक-से-अधिक मनुष्यों तक पहुँचने का प्रयास करो।

योग संवाद

स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती

20 जून 2021 को अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के उपलक्ष्य में दूरदर्शन पर प्रसारित 'योग संवाद' वार्ता से उद्धृत

स्वामीजी, प्राय: ऐसा माना जाता है कि योग शारीरिक व्यायाम है या फिर योग आध्यात्मिक साधना के लिये है या फिर कभी-कभी योग जिम्नैस्टिक जैसा माना जाता है। वास्तव में योग है क्या, इसके विषय में हम आप से जानना चाहते हैं।

यह प्रासंगिक प्रश्न है क्योंकि आज योग के बारे में अनेक अवधारणाएँ, भ्रांतियाँ और गलत-फहमियाँ प्रचलित हो चुकी हैं। हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द सरस्वती योग को एक समग्र विज्ञान के रूप में देखते थे, जिसका सम्बन्ध मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व से है। हम यह शरीर भी हैं, मन भी हैं, भावना भी हैं और साथ ही हमारे अन्य सूक्ष्म आयाम भी हैं। निश्चित रूप से योग का शारीरिक पक्ष भी है और वह आवश्यक है शारीरिक स्वास्थ्य के लिये। शारीरिक स्वास्थ्य एक मौलिक आवश्यकता है जो आज के दौर में और भी महत्त्वपूर्ण हो गई है। योग का यह पक्ष महत्त्वपूर्ण अवश्य है पर दुर्भाग्यवश केवल वही पक्ष आज समाज में उजागर है, प्रचलित है। हम तो कहेंगे कि वास्तव में यह योग का मात्र पाँच प्रतिशत भाग है, जबकि योग का मूल सम्बन्ध आपके मन से है।

मन का क्षेत्र ही हमारे सुख, शान्ति और संतोष को निर्धारित करता है। देखा जाए तो स्वास्थ्य के बाद सुख, शान्ति और प्रसन्नता हमारी दूसरी मौलिक आवश्कयता है। यह मन का आयाम है और अपने मन को सम्भालने, अपने मन के विचारों, व्यवहारों और प्रतिक्रियाओं को व्यवस्थित करने में योग का बहुत बड़ा योगदान हो सकता है।

आज के समय हमारी एक और मौलिक आवश्यकता है। हमने अपने स्वास्थ्य और सुख-शान्ति का ख्याल तो कर लिया, लेकिन हम एक ईकाई नहीं हैं, हम एक परिवार और समाज में रहते हैं, उनसे भी हम जुड़े हैं, उनके साथ हमारे सम्बन्ध कैसे हैं? सामंजस्य है या नहीं? हमारे व्यवहार और सम्बन्धों में सामंजस्य एक आवश्यकता है, और वह भी योग के द्वारा प्राप्त हो सकती है।

इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि योग सम्पूर्ण व्यक्तित्व को बेहतर और सुन्दर बनाने का विज्ञान और विद्या है। अभ्यासों के अलावा योग एक जीवनशैली भी है जिसे हम क्षण-प्रतिक्षण जी सकते हैं, जीना चाहिए। यदि लोग योग को इस दृष्टि से देखें, योग को केवल करने की चीज नहीं, बल्कि जीने की चीज समझें, तब हम अपने जीवन में योग के लाभ प्रत्यक्ष अनुभव कर पायेंगे।

आपने बताया कि योग जीवन जीने की शैली है। अभी हम देख रहे हैं कि कोरोना महामारी के कारण जो संक्रमण बढ़ा उससे विश्वभर में हाहाकार मचा। ऐसे में कुछ लोगों ने योग को अपनाना शुरू किया, उसके महत्त्व के प्रति और अधिक आकर्षित हुये, जागृत हुये, लेकिन आजकल सोशल मीडिया में जो आसन, प्राणायाम आदि योग की विधाएँ बतायी जा रही हैं, दिखाई जा रही हैं, उनमें बड़ा भ्रम रहता है कि किसको अपनायें, किसको न अपनायें। स्वामीजी, इस विषय पर आपके विचार हम जानना चाहेंगे।

योग सिखलाने के सबके अपने-अपने तरीके होते हैं। दूसरों के बारे में तो हम टिप्पणी नहीं कर सकते, पर अपनी विचारधारा को आपके समक्ष रख सकते हैं। हमलोगों का मानना है कि योग का प्रशिक्षण यदि शिक्षक के सान्निध्य में हो, उसके प्रत्यक्ष मार्गदर्शन में हो तो वह सबसे उत्तम है। ऐसे में शिक्षक देख सकता है कि योगाभ्यासी ने अभ्यास को सही ढंग से समझा है या नहीं, सही ढंग से उसका अभ्यास कर पा रहा है कि नहीं। दूसरी चीज, जब हम योग के उच्च अभ्यासों में आते हैं तब कुछ सावधानियों का ख्याल रखना पड़ता है। कुछ अभ्यास विशेष परिस्थितियों में वर्जित होते हैं। यदि शिक्षक प्रत्यक्ष रूप से जानता है कि विद्यार्थी की क्या सीमाएँ हैं तो उसके अनुसार सावधानियाँ बतला सकता है, अभ्यास को संशोधित कर सकता है। सोशल मीडिया या टी.वी. के माध्यम से जब प्रशिक्षण होता है तो उसमें यह नहीं हो पाता। यह एक पक्ष हुआ प्रश्न का।

जैसा आपने कहा आजकल महामारी का दौर है, लोगों को आना-जाना बाधित हुआ है, किसी कक्षा में जाकर प्रशिक्षण प्राप्त करना या तो सम्भव नहीं है या बहुत कठिन है। इस परिस्थिति में योग की ऐसी कई सरल विधियाँ हैं जिनको व्यक्ति इन माध्यमों से देख सकता है, समझ सकता है और अपनी सूझ-बूझ का प्रयोग करते हुये जीवन में अपना सकता है। मुख्य चीज है योग

का उचित प्रयोग। बहुत अधिक अभ्यास सीखने की आवश्कयता नहीं है, अगर आप चंद अभ्यासों को सीखकर उनका नियमित अभ्यास करें तो आप बहुत लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

स्वामीजी, एक आम आदमी अपनी दिनचर्या में कुछ नियमित अभ्यास यदि करना चाहे तो इसके लिए किस प्रकार के योग कैप्सूल आप हमें बताना चाहेंगे।

आप ने बहुत अच्छे शब्द का प्रयोग किया है, कैप्सूल। हमारे गुरु, स्वामी निरंजनानन्द जी ने इसी सिद्धान्त को कुछ वर्षों पहले प्रतिपादित किया यह देखते हुए कि आज का व्यक्ति अत्यन्त व्यस्त है, योगाभ्यास के लिये अलग से लम्बा समय निकाल पाना उसके लिए संभव नहीं है। तथापि योग की ऐसी सरल विधियाँ हैं जिन्हें छोटे-छोटे अंशों में, कैप्सूल रूप में दिन के अलग-अलग समय अगर अभ्यास में लायें तो योग आपकी पूरी दिनचर्या को प्रभावित करेगा, आपके दिनभर के मानसिक व्यवहारों और प्रतिक्रियाओं को बेहतर बनायेगा।

हमारे गुरुजी ऐसे पाँच कैप्सूलों का सुझाव देते हैं जिनका हम नियमित रूप से सेवन करें तो स्वास्थ्य, शान्ति और सामंजस्य, ये जीवन में स्वाभाविक रूप से आने लगेंगे। पहला कैप्सूल है मंत्रों का। मंत्रों के बारे में प्राय: लोगों की यह अवधारणा रहती है कि इनका धर्म से सम्बन्ध है, ये धार्मिक शब्द होते हैं। यह अवधारणा सही नहीं है। योग मंत्र शास्त्र को ध्वनियों और स्पंदनों के विज्ञान के रूप में देखता है। ये मंत्र हमारे अवचेतन मन पर प्रभाव डालते हैं और इनका अभ्यास करने का सबसे उत्तम समय है सबेरे, जगते ही। ये तीन मंत्र हैं महामृत्युंजय मंत्र, गायत्री मंत्र और दुर्गाजी के बत्तीस नाम, जिन्हें क्रमशः शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्पष्टता और भावनात्मक शान्ति की प्राप्ति के संकल्प के साथ 11, 11 और 3 बार किया जाता है। सबेरे उठने पर आप न पूरी तरह जगे हैं न सोये हैं। मन की यह अवचेतन अवस्था एक संवेदनशील अवस्था है, जिसमें मंत्र रूपी बीजों का आरोपण कर देने पर वे दिनभर मन में एक सकारात्मक पृष्ठभूमि कायम रखते हैं।

दूसरा कैप्सूल है आसनों का। एक सामान्य, नीरोग व्यक्ति के लिये पाँच आसन पर्याप्त हैं – ताड़ासन, तिर्यक् ताड़ासन, कटिचक्रासन, सूर्यनमस्कार और विपरीत करणी आसन। ये पाँच आसन आपके पूरे शरीर का व्यायाम

करते हैं, पूरे शरीर में रक्त-संचार और सूक्ष्म स्तर पर प्राणों का संचार बढ़ता है। स्वास्थ्य में सुधार होता है और हम आरोग्य की तरफ कदम बढ़ाते हैं। इसका उपयुक्त समय सबेरे नाश्ते से पहले है, पर यदि समय के अभाव के कारण छूट जाये तो दिन के किसी अन्य समय भी कर सकते हैं, बस भोजन के तुरन्त बाद न हो।

तीसरा कैप्सूल है प्राणायामों का और इसमें भी केवल दो प्राणायाम पर्याप्त हैं। पहला है नाड़ीशोधन प्राणायाम, जिसका सीधा प्रभाव पड़ता है हमारे मस्तिष्क के दोनों गोलार्धों और तंत्रिका-तंत्र पर, जहाँ सन्तुलन और सामंजस्य की अवस्था आती है। दूसरा प्राणायाम है भ्रामरी प्राणायाम। इसका भी मस्तिष्क पर प्रशांतक प्रभाव पड़ता है जिसे वैज्ञानिक शोधों ने प्रमाणित भी किया है। मस्तिष्क में मेलाटोनीन नाम का एक रसायन होता है जिसका सम्बन्ध हमारी निद्रा से रहता है। इसके स्राव पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। हाल के कुछ शोधों ने यह भी दर्शाया है कि इस प्राणायाम से नासिकाओं में नाइट्रिक ऑक्साइड नामक एक रसायन का उत्पादन भी बढ़ता है जिससे अनेक शारीरिक प्रणालियों की कार्यक्षमता सुधरती है। इन दो प्राणायामों का अभ्यास अगर आप आसनों के बाद कर लें तो अति उत्तम, नहीं तो दिन के किसी अन्य समय भी कर सकते हैं।

इसके बाद फिर आप अपनी सामान्य दिनचर्या में संलग्न होते हैं। शाम के समय जब आप दफ्तर से लौटते हैं या घर के काम-काज से मुक्त होते हैं, तो एक विश्रान्ति और शिथिलीकरण का अभ्यास कर लीजिये। यह चौथा कैप्सूल है। इसके अन्तर्गत एक बहुत उपयोगी विधि है योगनिद्रा, जिसका आविष्कार हमारे परमगुरु, स्वामी सत्यानन्द जी ने किया था। इस सरल विधि में आप एक आरामदायक स्थिति में लेट जाते हैं और केवल निर्देशों का मानसिक रूप से अनुसरण करते जाते हैं। इससे दिनभर की गतिविधियों से उत्पन्न शारीरिक और मानसिक तनावों का निराकरण होता है।

पाँचवाँ और अन्तिम कैप्सूल है ध्यान का लघु अभ्यास। ध्यान का सम्बन्ध हमारे मन से, हमारे मानसिक व्यवहारों से है। दिन में हमने मन में जो कुछ एकत्र कर लिया था, किसी से लड़ाई-झगड़ा हुआ, किसी से अनबन हुई, कोई भय आया, कोई चिन्ता की बात हुई, सोने से पहले यदि एक ध्यान का छोटा-सा अभ्यास कर लें तो यह हमारे मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक होगा। ध्यान के कुछ उदाहरण हैं – अजपा-जप का अभ्यास, जिसमें श्वास और मंत्र पर ध्यान दिया जाता है, और अन्तर्मौन का अभ्यास, जिसमें अपने विचारों का अवलोकन किया जाता है। सोने से पहले अपने आपको तनावमुक्त और सकारात्मक बनाने के लिए ये बहुत कारगर उपाय हैं।

योग के इन सरल अभ्यासों को कैप्सूल रूप में अगर आप दिन के अलग-अलग समय प्रयोग में लाएँ, इन्हें अपनी दिनचर्या का अंग बना लें, तो आप पायेंगे कि कम-से-कम समय और प्रयास लगाते हुए भी आप अधिक-से-अधिक लाभ प्राप्त करेंगे।

प्राय: माना जाता है कि योग के जीवन में बहुत कठोर अनुशासन है और जीवन के सभी आनन्द भी इसके लिये छोड़ने पड़ेंगे। आजकल का समय ऐसा है, इतना बदलाव हो चुका है कार्य की शैली में कि लेट नाइट शिफ्ट भी चलती है। ऐसे में योग को कैसे शुरू करें और इसका क्या समाधान देखते हैं आप?

जहाँ तक अनुशासन की बात है, यह तो योग का एक तरह से पर्याय है। महर्षि पतंजलि के योग सूत्रों का प्रारम्भ भी योग के अनुशासन से होता है। हम समझते हैं कि लोग अनुशासन से नाहक घबराते हैं। उन्हें लगता है कि कुछ भोग त्यागना पड़ेगा, पर वास्तव में योग का भोग से कोई विरोधाभास

नहीं है। अगर भोग का अनुभव भी योग के अनुशासन और संयम के साथ हो तो उसे पूरे आनन्द के साथ अनुभव कर पायेंगे।

उदाहरण के तौर पर एक पतंग को लीजिये। पतंग हवा में तभी उड़ता है जब तक वह डोर से बँधा रहता है। यदि कोई कहे कि यह डोर तो पतंग को रोक रही है, उसे ऊपर नहीं जाने दे रही है, और आप डोर को काट देते हैं तो क्या होगा? थोड़ी देर पतंग हवा में फड़फड़ायेगा, फिर नीचे आ जायेगा। यह सोच गलत थी कि डोर पतंग को रोक रही है, सच तो यह है कि उस डोर की वजह से ही पतंग उड़ पाता है।

इसी तरह हमारे जीवन में संयम और अनुशासन की डोर योग के साथ आती है। अपने जीवनरूपी पतंग को अगर हम आसमान में उड़ाना चाहते हैं तो वह तभी उड़ेगा जब जीवन में कुछ संयम और अनुशासन रहे। यही योग का जीवनशैली पक्ष है। हम किस समय सोते हैं, किस समय उठते हैं, यदि वहाँ थोड़ा संयम ले आयें तो निश्चित रूप से जीवन और स्वास्थ्य पर बहुत अन्तर पड़ेगा। हम किस समय भोजन लेते हैं, यदि वह समय निश्चित हो जाये, दिनभर कुछ-न-कुछ खाते रहने की आदत पर थोड़ा-सा अंकुश लग जाए तो हमें ही लाभ होगा। हम यह नहीं कह रहे कि भोजन करना छोड़ दीजिये या अपने भोजन को बदल दीजिये, बस भोजन में थोड़ा-सा संयम लाने की, जीवन की सभी गतिविधियों में थोड़ा-सा अंकुश लगाने की बात है।

लोग डिजिटल मीडिया का जरूरत से ज्यादा उपयोग करते हैं। हमारे गुरु, स्वामी निरंजनानंद जी कहते हैं कि सामान्य उपवास की ही तरह डिजिटल उपवास करके देखिये। सप्ताह में एक दिन, एक दिन नहीं तो एक घंटा ही सही यह निर्णय ले लीजिये कि आप अपने डिजिटल उपकरणों का उपयोग नहीं करेंगे। कम-से-कम भोजन के समय तो इतना संयम रखना चाहिये। भोजन के समय जब पूरा परिवार एक एक साथ बैठता है उस समय बार-बार मोबाइल देखने की क्या आवश्यकता है? कम-से-कम उस समय बंद कर दीजिये। इन बिन्दुओं को आप एक-एक करके अपनाते जायेंगे तो अपने व्यवहार और सम्बन्धों में इसका प्रत्यक्ष प्रभाव देख पायेंगे।

जहाँ तक शिफ्ट में काम करने वालों की बात है, उनके लिये थोड़ा कठिन जरूर होगा, पर इस कैप्सूल सिद्धान्त की विशेषता यही है कि इसे अपनी दिनचर्या के अनुरूप ढाला जा सकता है। अगर आप नाइट शिफ्ट पर काम करते हैं और सबेरे सो जाते हैं तो आसनों तथा अन्य अभ्यासों के लिए कोई दूसरा

उपयुक्त समय चुन लें। वहाँ भी अपनी समझदारी और सूझ-बूझ का इस्तमाल करते हुये अगर हम योग को उपयोग में लायें तो निश्चित रूप से लाभान्वित होंगे।

स्वामीजी, इस अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर आपका संदेश हम जानना चाहेंगे।

आज के दौर में हमारी मुख्य आवश्यकताएँ शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक सुख-शान्ति और पारिवारिक एवं सामाजिक सामंजस्य हैं। योग हमें यह सब देने में सक्षम है। योग को हम केवल एक शारीरिक अभ्यास तक सीमित न रखें। कहीं ऐसा न हो कि हम योग को क्लास में कम्बल बिछाकर एक घण्टे करने की चीज ही समझें और बाकी समय भूल जायें। नहीं, योग हमारे जीवन से, हमारे जीवन के प्रत्येक व्यवहार से सम्बन्ध रखता है। आखिर हमारा जीवन है क्या? जो भी हम सोचते हैं, जो भी हमारी भावनायें हैं, जो भी हमारे व्यवहार हैं, प्रतिक्रियाएँ हैं, सम्बन्ध हैं, महत्त्वाकांक्षाएँ हैं, नौकरी-पेशा है, ये सब जीवन के अंग हैं, और योग इन सबको उन्नत बना सकता है यदि हम उसे उचित तरीके से उपयोग में लायें।

सभी देशवासियों के लिये हमारा यही संदेश है कि योग को इस समग्र दृष्टिकोण से देखें, इसके अधिकाधिक अंशों को जीवन में अपनाने का प्रयास करें और उसके माध्यम से न केवल अपने जीवन में स्वास्थ्य, सुख-शान्ति और सामंजस्य देखें पर अपने आसपास के लोगों को भी इस दिशा में प्रेरित और प्रोत्साहित करें।

कर्मयोग – गीता के आलोक में

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

20 जुलाई 2021 को स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती द्वारा युवा योग मित्र मण्डल के सदस्यों को दिए गए योग शिक्षा सत्र का चौथा सत्संग

आज का विषय है कर्मयोग। कर्मयोग के दर्शन या शास्त्र के कोई ऋषि प्रणेता नहीं रहे हैं। हठयोग में मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ जैसे संत और ऋषि रहे, राजयोग में शुक्राचार्य, याज्ञवल्क्य और पतंजलि जैसे महर्षि रहे, क्रियायोग में बाबाजी जो शिवजी के ही स्वरूप हैं, लेकिन कर्मयोग के संदर्भ में ऐसे किसी ऋषि-मुनि का उल्लेख नहीं आता जिसने इसके बारे में कुछ कहा या लिखा हो या इसको समझाया हो।

कर्मयोग के प्रणेता

कर्मयोग पर सबसे श्रेष्ठ ग्रन्थ की रचना करीब पाँच हजार पाँच सौ साल पहले अपने देश में हुई और उसके व्याख्याकार हुए भगवान श्रीकृष्ण। श्रीकृष्ण गीता में कहते भी हैं कि 'अर्जुन, सबसे पहले मैंने यह कर्मयोग सूर्य को सिखाया, उसके बाद अन्य ऋषियों और देवताओं को समझाया और बहुत काल के बाद अब तुमको समझा रहा हूँ।'

इससे हम यह समझ सकते हैं कि कर्मयोग के प्रणेता स्वयं ईश्वर हैं। आखिर कर्म के स्रष्टा भी तो वही हैं। जीवन भी कर्म प्रधान है, जीवन से कर्म हटा दो तो जीवन में कुछ भी रस नहीं है। शरीर से कर्म हटा दो तो शरीर मरा हुआ है, मन से कर्म हटा दो तो मन मर जायेगा और जीवन से कर्म हटा दो तो जीवन समाप्त है। मानव शरीर में कर्म प्रधान है, चाहे वह स्थूल शरीर हो या सूक्ष्म या कारण। स्थूल शरीर में कर्मेन्द्रियाँ, सूक्ष्म शरीर में मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार और कारण शरीर में संस्कार हमारे कर्म के कारण बनते हैं। विषयों के प्रति हमलोगों के जो आकर्षण-विकर्षण, आसक्ति, लोभ या अन्य भाव उत्पन्न होते हैं वे सब भी कर्म ही हैं। मनुष्य जीवन-पर्यन्त कर्म में लिप्त रहता है, और जब कर्म समाप्त होता है तो जीवन भी समाप्त होता है। तुम जो भी करते हो उसका एक परिणाम होता है। ताली बजाओगे तो आवाज निकलेगी, जमीन में बीज डालोगे तो समय आने पर अंकुरित होगा, जन्म

लोगे तो मरना भी होगा। मतलब कर्म से कोई मुक्त नहीं है, और कर्म से ही जीवन का अनुभव होता है।

कर्म का प्रयोजन

जब कर्म चारों तरफ व्याप्त है और हमारे जीवन का अभिन्न अंग है तो इससे सम्बंधित कौन-सी चीजों के बारे में हमें सतर्क रहना चाहिये? कर्म के प्रति चिन्तन और दृष्टिकोण क्या होना चाहिये, कर्म का प्रयोजन क्या होना चाहिये? यही प्रश्न अर्जुन पूछता है और उत्तर में भगवान तीन सीधी बातें कहते हैं। सबसे पहले बतलाते हैं कि कर्म का प्रयोजन क्या होना है – *योगिन: कर्म कुर्वन्ति संगं त्यक्त्वात्मशुद्धये।* मतलब योगी जो कर्म करता है उसमें आसक्ति नहीं रहती, भोग की कामना नहीं रहती, बल्कि वह कर्म उसकी शुद्धि के लिये होता है। इससे स्पष्ट होता है कि योगी का ठीक विपरीत है भोगी, जिसका कर्म बंधनकारक होता है, आसक्ति द्वारा प्रेरित होता है – 'मुझे इसकी कामना है, मैं यह चाहता हूँ।' एक हुआ आत्म-शुद्धि और मुक्ति का मार्ग, दूसरा हुआ आसक्ति और बंधन का मार्ग जिसमें भोगी 'यह मेरा है, वह मेरा है' के भाव से जुड़ जाता है, उसको समेट लेता है अपने में। यह स्थिति वैसी ही है कि हम एक पेड़ को पकड़कर चिल्लाएँ कि यह पेड़ मुझे छोड़ नहीं रहा है।

कर्मयोग का उद्देश्य समझाते हुए भगवान कहते हैं कि पहली चीज, बंधन में मत पड़ो। सामान्य कर्म तुम्हें बंधन में डालता है, क्योंकि उसमें स्वार्थ, कामना,

इच्छा, चाह और वासना है। ये सब तुम्हें विषयों में और अधिक लिप्त करेंगे। तुम सुख की कामना करोगे, लेकिन दु:ख ज्यादा भोगोगे। यही होता है एक भोगी के जीवन में। इसलिये श्रीकृष्ण ने स्पष्ट किया कि कर्म का लक्ष्य कर्म से आसक्ति नहीं, आत्म-शुद्धि है। उन्होंने यह नहीं कहा कि कर्म मत करो, कर्म तो करना है, लेकिन कर्म से आसक्ति नहीं रखनी है। कर्म करना है और श्रेष्ठ रूप से करना है, सुन्दर तरीके से करना है, लेकिन आसक्ति मुक्त होकर, एक कर्त्तव्य के रूप में, एक धर्म के रूप में।

यह बात अर्जुन के लिए उपयुक्त है, क्योंकि उसे तो लड़ना है। लड़ने का मतलब लोग मरेंगे, चोट लगेगी। कोई अस्पताल में जायेगा तो कोई श्मशान में जायेगा। लड़ाई के ये दो परिणाम तो होंगे ही। इसलिये अर्जुन सोच रहा था कि मैं नहीं लड़ूँगा। लेकिन भगवान उसे कहते हैं कि क्षत्रिय का धर्म है लड़ना। तुम क्षत्रिय हो, तुम लड़ो क्योंकि उस धर्म से तुम अलग नहीं हो सकते हो। उस धर्म निर्वहन के लिये कर्म करना है, लेकिन अगर तुम आसक्ति से जुड़ जाते हो तो तुम कहोगे कि ये मेरे दादाजी खड़े हैं, ये मेरे मामा खड़े हैं, ये मेरे चाचा खड़े हैं, ये मेरे भाई खड़े हैं। आसक्ति के कारण तुम्हें नर्वस ब्रेकडाऊन हो रहा है, इसी कारण तुम धर्म को भूल रहे हो। आसक्ति मुक्त होकर कर्म करना कर्मयोग का उद्देश्य है, और इससे फिर आत्म-शुद्धि होती है। जो इसको कर सकता है वही कर्मयोगी है।

समत्व और संतुलन

श्रीकृष्ण आगे कहते हैं कि जो भी कर्म करते हो उसमें हमेशा संतुलन को रखने का प्रयास करो, उसमें खींचातानी न हो। तराजू के दोनों पलड़े बराबर रहें तो कोई खींचातानी नहीं है, लेकिन एक पलड़ा हल्का हो जाय, दूसरा भारी हो जाय तो खींचातानी शुरू हो जाती है। जिस तरह तराजू में संतुलन आवश्यक है उसी तरह अपने हर व्यवहार में संतुलन और समत्व को बनाये रखना है – *समत्वं योग उच्यते।*

बिना ज्ञान और विवेक के समत्वम् संभव नहीं है। कर्म-परिणाम का ज्ञान होना और उसके अनुसार कर्म करना विवेक कहलाता है। अगर कोई तुम्हें गाली देता है और तुम भी उसे गाली देते हो तो उसका परिणाम क्या होगा? हाथापाई हो जाएगी। लेकिन अगर तुम गाली देने वाले को नमस्कार करते हो, सिर झुका देते हो, तो उसका गाली देना बन्द हो जायेगा। किसी परिस्थिति

में हमको क्या करना है, यह निर्णय अहंकार से भी लिया जा सकता है और विवेक से भी। अहंकार कहता है, लाठी उठाओ, दो झापड़ मारो, लेकिन विवेक कहता है कि अगर हम लाठी उठाते हैं तो इसका परिणाम ऐसा हो सकता है, और अगर हम उसके सामने हाथ जोड़ देते हैं तो दुष्परिणाम से बच सकते हैं और परिणाम को अपने तरीके से मोड़ सकते हैं, इसलिये सोचकर करो। इस प्रकार कर्म, विचार और व्यवहार में संतुलन लाने के लिये विवेक की आवश्यकता होती है। यहाँ पर कर्म में विवेक को जोड़ा गया और यह श्रीकृष्ण द्वारा दूसरा निर्देश दिया गया। पहले बतलाया गया कि कर्मयोग का लक्ष्य क्या है और अब बतलाया जा रहा है कि कर्म से विवेक को जोड़ो, तब जाकर समत्वम् का अनुभव होगा।

कर्म में प्रवीणता

इसके बाद श्रीकृष्ण तीसरी बात कहते हैं – *कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।* तुम्हें कर्म करने का अधिकार है, कर्म करते रहो, लेकिन फल की अपेक्षा मत करो। कर्म का परिणाम शुभ होगा या अशुभ होगा, इस चिन्ता में मत पड़ो। तब तुम्हारी रचनात्मक वृत्ति प्रकट होगी, नहीं तो आलसी वृत्ति हमेशा पीछे ढकेल देगी। 'अरे छोड़ो, अभी नहीं करेंगे' – किसी चीज को टरकाना आलसी वृत्ति है। जब तक हमें कोई बड़ा फल दिखलाई नहीं देता हम टरकाना नहीं छोड़ते। लेकिन अगर कोई कहे कि इस काम के लिये तुम्हें दस हजार देंगे तो हम तुरन्त तैयार हो जाते हैं। फल की लालसा आ जाती है। क्या हम फल की अपेक्षा के बिना भी उत्कृष्टता से कर्म कर सकते हैं?

जब हम मुंगेर आये थे तो सबसे छोटे हम ही थे। बाकी अधिकतर बूढ़े लोग ही थे, क्योंकि उस जमाने में संन्यास के लिये चतुर्थ वर्ग के लोग ही आते थे। वे सब सोचते थे कि योग करने से हमको भगवान का दर्शन होगा या मोक्ष मिलेगा। लेकिन हम उसका उल्टा सोचते थे। हम सोचते थे कि भगवान से मिलकर हमको क्या करना है भाई! ये लोग जाने वाले हैं, इसलिये सोचते हैं कि हमको भगवान से मिलना है, लेकिन हम तो अभी आये हैं इस धरती पर, हम क्यों सोचें कि हमको भगवान से मिलना है। योग का लक्ष्य ईश्वर-दर्शन या मोक्ष भले हो सकता है, लेकिन 9-10 साल की उम्र में हमारे लिये यह जीवन का लक्ष्य नहीं था। अरे, मुक्ति मिल गयी तो फुटबॉल कौन खेलेगा, चॉकलेट कौन खायेगा? तब योग को अपनाने में हमारा क्या उद्देश्य होना चाहिये?

हमने सोचा, 'जब आश्रम में ही रह रहे हैं, यहीं पर पढ़ रहे हैं तो यहाँ पर हमें बहुत सारे अवसर मिलेंगे, सभी का फायदा उठाओ, हरेक चीज को सीखो और हरेक चीज में निष्णात हो जाओ।'

बहुत लोग हमसे कहते हैं कि स्वामीजी, हमारा कर्मयोग बदल दीजिये, बहुत दिन हो गये एक ही जगह झाड़ू लगाते हुये। हम कहते हैं, 'पचास साल से हम एक ही जगह झाड़ू लगा रहे हैं और आज तक बोर नहीं हुये। इसलिये कि रोज हम सोचते हैं कि कल से आज बेहतर करेंगे। आज जो भी काम कर रहा हूँ, पहली और आखिरी बार कर रहा हूँ, इसलिये सबसे अच्छा करूँगा।' अगर यह सिद्धान्त तुम अपने जीवन में उतारोगे तो कुछ भी कर सकते हो। एक कलाकार आज तूलिका चला रहा है, कल और अच्छा चलायेगा, परसों और अच्छा चलायेगा। निष्णात होने का यही मतलब है, प्रवीणता का आना, उत्कृष्टता का आना। अगर हम यह मानकर चलें कि रोज हमारे लिये नया दिन है और हम जो कर रहे हैं वह जीवन में पहली और अंतिम बार कर रहे हैं, इसलिये उत्तम-से-उत्तम तरीके से करेंगे, तब हमें कोई परेशानी ही नहीं है। कर्म से हम कभी बोर नहीं होंगे।

हमारा यही प्रशिक्षण रहा है और हमने इसी प्रयोजन से योग को अपनाया। अगर बूढ़े होते तो सोचते कि ठीक है, अब आखिरी दिन हैं, भगवान का भजन कर लें, लेकिन 10 साल की उम्र में क्यों सोचेंगे कि आखिरी दिन है, हमें तो लम्बा जीवन जीना है, इसलिये क्यों न हर चीज अच्छे से करें? और हमने अपने जीवन में यही किया। शायद ही कोई ऐसी चीज हो जिसे हमने न किया हो। घोड़े को प्रशिक्षण दिया, उसको चलाया। कम्प्यूटर को चलाया, मोटर गाड़ी को चलाया, हवाई जहाज को चलाया, पानी वाले जहाज को चलाया। जो चल सकता था उसको चलाया, जल में, थल में और नभ में। अन्तरिक्ष

बाकी है, वह देखेंगे अगले जन्म में! जब तक व्यक्ति हर चीज में प्रवीण होने का संकल्प नहीं लेता, उसके जीवन में सफलता नहीं आती है। कृष्ण जी इसी चीज को समझाते हुए कहते हैं कि प्रवीणता को प्राप्त करने के लिये फिर फल की आशा मत करो। प्रवीणता से अपने सम्बन्ध को जोड़ो, फल से नहीं। जब प्रवीणता आ जाती है तब फल अपने आप उतना ही बड़ा हो जाता है, और साथ ही अपने आप वैराग्य की स्थिति आती है। जब कर्म को श्रेष्ठ तरीके से, प्रवीणता के साथ करना है, और फल की कामना नहीं रखनी है तो यह वैराग्य की ही अभिव्यक्ति हुई।

जीवन में रचनात्मकता

श्रीकृष्ण ने कर्मयोग के संदर्भ में इन तीन चीजों को समझाया है। कर्म हर व्यक्ति करता है, लेकिन वह कर्मयोग तब कहलायेगा जब हम इन तीन शर्तों को पूरा करते हैं। पहली शर्त है कि जो भी करो, अनासक्त भाव से आत्म-शुद्धि के लिये। झाड़ू भी लगा रहे हो तो सोचो कि बाहर सफाई हो रही है और भीतर भी मन और दिल साफ हो रहे हैं। दूसरी शर्त है विवेक, क्योंकि उसके माध्यम से समभाव की प्राप्ति होती है। तीसरी चीज है वैराग्य, क्योंकि जब फल की कामना नहीं तो मनुष्य केवल कर्म से जुड़ता है और वह कर्म श्रेष्ठ, प्रवीण एवं उत्तम होता है।

इन्हीं तीन बिन्दुओं के आधार पर अन्य साधुओं ने कर्मयोग को समझाया है, चाहे वे स्वामी विवेकानन्द जी हों या स्वामी शिवानन्द जी या स्वामी सत्यानन्द जी या हम। कर्मयोग को समझाने और उसको अपने जीवन में आत्मसात् करने का आधार यही रहा है। कर्म में जब परिष्कृति आती है तब फिर जीवन में सुधार आता है, और वह सुधार सकारात्मक, रचनात्मक और उत्थानात्मक होता है। अपने व्यवहार को और भी रचनात्मक बनाने की क्षमता हम सभी लोग रखते हैं और वही प्रयास कर्मयोग कहलाता है।

परमहंस सत्यानन्द – मेरी स्मृतियाँ

स्वामी धर्मशक्ति सरस्वती

शिवानन्द जी महाराज का आशीर्वाद हमेशा स्वामी सत्यानन्द जी के साथ था, जिसके बूते पर उन्होंने भगीरथ जैसा असाध्य काम कर दिखाया। मैं इतने वर्षों से देख रही हूँ, आज स्वामी शिवानन्द जी के हजारों शिष्य दुनिया में सब ओर फैल गए हैं। सब योग का काम कर रहे हैं, योग का प्रचार कर रहे हैं, लेकिन उनके नाम से नहीं, अपने नाम से। और हमने अपने श्री स्वामीजी को देखा, उनका हर काम गुरु जी को समर्पित था। गुरु का नाम, गुरु का काम, अपना कुछ नहीं। ऐसे होते हैं सच्चे संन्यासी और ऐसी होती है सच्ची गुरु सेवा। वे हम लोगों के सच्चे गुरु हैं। भले ही वे अपने आप को गुरु न मानते हों, लेकिन हम उनको गुरु मानते हैं, क्योंकि हम ने उनके साथ रहकर जो अनुभव किया, वह यही कि वे सर्वसमर्थ और सर्वशक्तिमान् थे, जो चाहे कर सकते थे।

उनके जीवन का हर पड़ाव बीस वर्षों के क्रम से चलता रहा। घर में रहे बीस वर्ष, गुरु आश्रम में रहे बीस वर्ष, कार्य क्षेत्र में रहे बीस वर्ष और उन्होंने जिस साधना और संन्यास धर्म का पालन किया, उसमें भी बीस वर्ष रहे। बड़ी शांति से सबसे मिलते-जुलते, काम करते। एक दिन भी निष्क्रिय नहीं रहे कि आज मैं थक गया, या आज मैं यह काम नहीं कर सकता। करते रहे काम आखिर तक। वे चाहते तो बीस वर्ष और रह सकते थे, लेकिन उन्होंने यही सोचा कि मेरा मन पक्का है, लेकिन शरीर पक्का नहीं रहेगा। इसलिए मुझे जाना है, जाना है और जाना है। और वे ऐसे आराम से गये जैसे हम लोग बद्री-केदार जाते हैं। सुना था कि केदारनाथ से पाण्डवों के सबसे बड़े भाई युधिष्ठिर सीधे स्वर्ग चले गये थे, पहाड़-ही-पहाड़ चढ़ कर। वैसे ही श्री स्वामीजी भी चले गये हम लोगों को छोड़कर। *क्रमश:*

– 'मेरे आराध्य के चरणों में' से दिनेश खरे, दुर्ग द्वारा संकलित

योग विद्यालय का कोरोना प्रबंधन

संन्यासी आनंदधर्म (सेवानिवृत्त न्यायाधीश, छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय)

कोरोना वैश्विक महामारी के दिनों में काफी समय के पश्चात् मुझे अपने गुरु, स्वामी निरंजनानन्दजी के सान्निध्य में गंगा दर्शन योगाश्रम में कुछ समय व्यतीत करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। बिहार योग विद्यालय का जीवन अनुशासित और सुव्यवस्थित है। यहाँ सभी मस्त, व्यस्त, स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं। आश्रम में इतनी स्वच्छता रहती है जैसी पाँच सितारा होटलों में भी नहीं होती। स्वामीजी के मार्गदर्शन में यहाँ के सभी निवासी एवं अतिथि आश्रम की व्यवस्था में स्वेच्छा से लगे रहते हैं। स्वामीजी सभी का परिवार के मुखिया की तरह या उससे भी अधिक ध्यान रखते हैं।

आज की महामारी की परिस्थिति में मैंने यहाँ आकर तथा इसके पूर्व भी, स्वामीजी के डिजिटल प्रसाद के रूप में कोरोना महामारी के प्रबंधन के विषय में जो कुछ भी अनुभव किया है, वह इतना दूरदर्शी, सशक्त, युक्तियुक्त एवं अभूतपूर्व है कि स्वामीजी के श्रीचरणों में नमन मात्र करने से मेरा मन संतुष्ट नहीं हो रहा है। मुझे तीव्र इच्छा हो रही है की यहाँ के कोरोना प्रबंधन की जानकारी विश्वभर में सर्वसामान्य जनों को, विभिन्न कार्यरत शासकीय, अर्धशासकीय एवं अशासकीय संस्थानों तक पहुँचे।

सामान्य तौर पर बिहार योग विद्यालय विशुद्ध, शास्त्रीय यौगिक ज्ञान का केंद्र है। यहाँ आसन-प्राणायाम आदि को टेलीविजन पर प्रसारित कर योग का आधा-अधूरा ज्ञान नहीं दिया जाता, तथापि परिस्थिति को देखते हुए आवश्यकता अनुसार डिजिटल प्रसाद प्रदान किया गया। ऐसा कोरोना प्रबंधन एवं परिणामस्वरूप कोरोना पर पूर्ण नियंत्रण और संपूर्ण कोरोना काल में मस्त एवं स्वस्थ जीवन, शायद विश्व में कहीं और दिखाई नहीं देगा।

मैं यहाँ 27 सितम्बर 2021 को पहुँचा। निर्देशानुसार मैं आर.टी.पी.सी. आर. की निगेटिव रिपोर्ट तथा वेक्सीनेशन का प्रमाण पत्र भी साथ लेकर आया था। आते ही मेरी जाँच हुई, बुखार आदि न होने पर भी मुझे एवं मेरे सामान को मशीन के माध्यम से सेनीटाइज किया गया। सभी आश्रमवासियों के लिए, आश्रम में रहते हुए भी मास्क लगाना अनिवार्य था। मुझे अलग कमरा दिया गया तथा कुछ दिनों के लिए क्वारंटीन किया गया। मेरी भोजन आदि की

समुचित व्यवस्था मेरे कमरे में ही की गई। क्वारंटीन अवधि के पश्चात् मेरी पुनः जाँच हुई और उसके बाद ही मुझे आश्रम के नियमित कार्यक्रमों में भाग लेने का सुअवसर प्राप्त हुआ। सब आश्रमवासियों के चेहरों पर हमेशा मास्क रहता था और सभी कार्यक्रमों में एक आवश्यक दूरी रखकर ही सब बैठते थे। जरा सोचिये, यह स्थिति आश्रम के अंदर की वर्तमान स्थिति है। कोरोना की प्रथम एवं द्वितीय लहर के मध्य मेरी जानकारी के अनुसार और भी अधिक कड़ाई से इसका पालन किया गया होगा। स्वामीजी की दूरदर्शिता के कारण 25 मार्च 2021 को लगने वाले संपूर्ण लॉकडाउन के पूर्व ही आश्रम में प्रवेश बंद कर दिया गया था। स्वामीजी सहित सभी आश्रम निवासी इतने बड़े आश्रम का समस्त प्रबंध, स्वयं-स्फूर्त होकर करते रहे। आश्रम में उगी सब्जियों और खिचड़ी आदि का भोजन ही प्रसन्नतापूर्वक करते रहे।

स्वामीजी के निर्देशन में तैयार किये गये डिजिटल प्रसाद के माध्यम से संपूर्ण समाज एवं विशेषकर कोरोना वॉरियर्स लाभान्वित हुए। उन ऑडियो-वीडियो प्रस्तुतियों में यथोचित आसन-प्राणायाम के अभ्यास, दैनिक जीवनचर्या, भोजन आदि की पूर्ण जानकारी थी। इसके अतिरिक्त स्वामीजी आश्रम की आर्थिक स्थिति की ओर ध्यान दिये बिना सभी मुंगेरवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति दिल खोलकर करते रहे। तीन चलते-फिरते अस्पताल रूपी एम्बुलेंस भी मुंगेरवासियों को प्रदान किये गये।

कोरोना प्रबंधन एवं उस पर नियंत्रण जैसा बिहार योग विद्यालय, मुंगेर में हुआ है और हो रहा है इसका आंशिक पालन भी आम जनता स्वंय-स्फूर्त होकर करे तो फिर कोरोना महामारी क्या, जीवन की किसी भी परिस्थिति में हम स्वस्थ, मस्त एवं प्रसन्न रहकर जीवन व्यतीत कर सकेंगे। सभी भक्तों से मेरा निवेदन है कि वे अपने जीवन में इस यौगिक अनुशासन का अनुकरण कर दूसरों के जीवन में और विश्वभर में यह संदेश पहुँचाकर सर्वजनहिताय सर्वजनसुखाय के स्वामीजी के संकल्प को पूरा करने में गिलहरी बनें।

योग की कुछ बातें

के.एम. जयपुरियार, पटना

योग अर्थात् जोड़ना, इसका तात्पर्य स्वयं या परमात्मा के साथ जुड़ने से है। मेरे इस जुड़ाव की शुरुआत सन् 1999 में हुई जब मैं अपने गृह नगर, मुंगेर में प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के लिये पुस्तकालय जाया करता था। उन्हीं दिनों मेरे एक मित्र ने मुझे युवा योग मित्र मंडल में अस्थायी प्रवेश के लिये बिहार योग विद्यालय जाने का सुझाव दिया। उन दिनों हम जैसे लोगों का गंगा दर्शन परिसर में प्रवेश एक बहुत बड़ी बात थी क्योंकि हमें लगता था कि यहाँ अधिक पैसे वाले अथवा विदेशी मेहमान ही जा सकते थे। वास्तव में श्रद्धेय स्वामी सत्यानंदजी ने जन-साधारण में योग के प्रचार-प्रसार के लिए इस संस्था की स्थापना की थी जो आज स्वामी निरंजनानंद सरस्वती के सफल मार्गदर्शन में भली-भाँति फल-फूल रही है।

मैंने गंगा दर्शन में युवा योग मित्र मंडल में प्रवेश के लिए फॉर्म भरा और उस परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त कर इसके संस्थापक सदस्यों में से एक होने का श्रेय प्राप्त किया। इसके लिये तीन माह तक प्रत्येक शनिवार और रविवार को आश्रम में पूरे दिन रहते थे। इस पाठ्यक्रम को मैंने पच्चीस सहयोगियों के साथ आनंदपूर्वक पूरा किया। इसी क्रम में हमने योग का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त किया जिसमें आसन-प्राणायाम तथा कुछ अन्य यौगिक क्रियाएँ सम्मिलित थीं। संध्या का कायास्थैर्यम्, संगीत के साथ चक्रों की सजगता एवं ॐ के उच्चारण में बहुत आनंद आता था, परंतु इन सब में मुझे सबसे प्रिय दोपहर के भोजन के बाद की योगनिद्रा लगती थी।

योगनिद्रा का अभ्यास

योगनिद्रा एक ऐसी विधि है जिसमें हम न तो पूर्ण रूप से सोते हैं और न जगे होते हैं। इसे स्वच्छ एवं शांत स्थान पर शवासन में लेट कर किया जाता है, जिसमें लगभग 20-30 मिनट का समय लगता है। इस क्रिया में कई क्रम होते हैं जैसे संकल्प, शरीर के सभी अंगों का अनुभव, विभिन्न प्रकार की ध्वनियों को सुनना, अपनी श्वासों का भान, मानस दर्शन आदि। प्रायः इस अभ्यास में लोग पूर्ण रूप से सो जाते हैं जबकि इसका उद्देश्य सोना नहीं है। फिर भी

अगर कोई सो जाता है तो उसे अचानक जगाना वर्जित है। उच्च रक्तचाप और अनिद्रा के रोगी अगर इसे रात्रि सोने के पूर्व करते हैं तो इससे अवश्य लाभ होता है। इसके अभ्यास से आप अपनी नींद की आवश्यकता को कम कर सकते हैं। यह अभ्यास आपको शरीर और आस-पास की स्थितियों के प्रति सजग करता है, अर्थात् यदि आप दिन में इसे कार्य के बीच में करते हैं तो यह आपकी कार्यदक्षता को बढ़ाने में अत्यंत सहायक हो सकता है क्योंकि इसके अभ्यास के बाद आपको लगेगा मानो आप गहरी नींद के बाद जगे हैं और फिर से उसी प्रकार तरो-ताजा हैं जैसे एक शांतचित्त निद्रा के बाद सुबह होते हैं। आपका शरीर स्फूर्त्ति से भर जाता है। इस अभ्यास में ध्यान रहे कि आपका शरीर धरती के प्रत्यक्ष सम्पर्क में न आये क्योंकि यह मानना है कि योग निद्रा से आपके द्वारा संग्रहित की गई ऊर्जा धरती में हस्तांतरित हो सकती है। अतः इसके अभ्यास के लिये कम्बल या दरी का उपयोग करें।

कायास्थैर्यम् की प्रक्रिया

कायास्थैर्यम् में योग निद्रा जैसे क्रमों को दोहराया जाता है, परंतु इसे शवासन में नहीं, बल्कि सुखासन, पद्मासन या सिद्धासन जैसे किसी ध्यान के आसन में बैठकर किया जाता है। इस अभ्यास के लिये आपको अपना मेरुदंड सीधा रखना होता है, इसका मतलब है कि आप स्वयं के प्रति तथा अपने कार्यों के प्रति पूर्ण सजग हैं। आप जब भी किसी व्यक्ति को सीधे मेरुदंड के साथ बैठे देखें तो आप यह समझ सकते हैं कि वह व्यक्ति अपने कार्यों के प्रति सजग

है। वह जिस कार्य को कर रहा है या जिस भी स्थिति में वर्तमान में आपको दिख रहा है, वह अपनी स्वनिर्धारित सीमाओं के परे नहीं जायेगा। अर्थात् यदि वह क्रोधित या आनंदित हो रहा है तो उसे यह भली-भांति ज्ञात है और वह इस क्रोध या आनंद के लिए निर्धारित सीमाओं के आगे बिल्कुल नहीं जाएगा। कायास्थैर्यम् का अभ्यास आप अपने कार्यालय में भी कर सकते हैं और यह भी आपको वही स्फूर्त्ति प्रदान करेगा जो योगनिद्रा से प्राप्त होती है।

चक्रों की सजगता

हम सभी जानते हैं कि जीव का प्रारम्भिक अस्तित्व एक भ्रूण की स्थिति में होता है। भ्रूण मेरुदंड का ही सूक्ष्म हिस्सा है जिसका अगला सिरा बाद में मस्तिष्क और शरीर के अन्य अंगों में विकसित होता है। जब हम माँ के गर्भ से बाहर आते हैं तो हमारी पहली श्वास हमारे जीवित होने का प्रमाण देती है। शरीर में मेरुदंड और श्वास सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसके बिना हमारे शरीर का कोई महत्त्व नहीं। योग विज्ञान भी इन्हीं दोनों को सर्वोपरि महत्त्व देता है। योग शास्त्र के अनुसार हमारे शरीर में कुल 72000 नाड़ियाँ हैं जिनमें इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना मुख्य हैं। हमारे शरीर में आठ चक्र हैं, जो मेरुदंड के अंदर सूक्ष्म शरीर में स्थित हैं। उनका क्रम मेरुदंड के निचले सिरे से मस्तिष्क की शिखा तक क्रमशः इस प्रकार है – मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिंदु एवं सहस्त्रार। योग में इन्हें जागृत करने की विद्या को कुंडलिनी जागरण कहा जाता है। मूलाधार से बिंदु तक सातों चक्रों के जागृत होने के पश्चात अंतिम चक्र सहस्त्रार जागृत होता है जिसका अर्थ है, स्वयं का पूर्ण रूप से साक्षात्कार होना अर्थात् आत्मा का परमात्मा के साथ योग होना। योग में इन सभी चक्रों को विभिन्न रंगों एवं कमल के दलों की संख्या से निरूपित किया गया है तथा इनके जागृत होने से हमारे शरीर पर कई लाभकारी प्रभाव होते हैं।

प्राणायाम के अभ्यास

योग शास्त्र में श्वासों का नियंत्रण एक अति महत्त्वपूर्ण अभ्यास है जिसके लिए विभिन्न प्राणायाम हैं। प्राणायाम हमारे शरीर की प्राण वायु को संतुलित करने की प्रक्रिया है, जिसका संतुलन हमारे भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन को प्रभावित करता है। यह हमारे चक्रों को संतुलित एवं जागृत रखने का उपयोगी साधन भी है। योग के अनुसार प्राण वायु हमारे शरीर में पंच प्राणों के रूप में

होती है। ये पंच प्राण हैं – प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान। वायु के इन पांच तरह से रूप बदलने के कारण ही व्यक्ति की चेतना जागृत रहती है, स्मृतियाँ सुरक्षित रहती हैं, पाचन क्रिया सही चलती है और हृदय में रक्त का सतत् प्रवाह होता रहता है। इनके कारण ही मन के विचार बदलते या स्थिर रहते हैं। इनमें एक भी जगह अवरोध हो तो शरीर और मन रोग-शोक से घिर जाते हैं। प्राणायाम का अभ्यास इन पंच प्राणों को शुद्ध और नियंत्रित भी करता है जिससे हमारा तन स्वस्थ होता है। स्वस्थ तन शुद्ध विचारों का वाहक होता है और शुद्ध विचार सजग, सकारात्मक और सार्थक कर्मों की प्रेरणा देते हैं।

ॐ का जप

ॐ ऐसी ध्वनि है जिसे बिना जीभ की सहायता से उच्चारित किया जा सकता है। इसमें तीन अक्षर हैं – 'अ', 'उ' एवं 'म' जिसमें 'अ' मणिपुर चक्र अर्थात् नाभि के स्थान से, 'उ' अनाहत चक्र अर्थात् हृदय क्षेत्र से एवं 'म' विशुद्धि चक्र अर्थात् कंठ के निचले सिरे से प्रारम्भ होता है। ॐ की ध्वनि को ब्रह्मांड की ध्वनि भी कहा जाता है जो इस ब्रह्माण्ड की गतिशीलता का भी परिचायक है क्योंकि जहाँ गति है, वहाँ कम्पन है और जहाँ कम्पन है वहीं ध्वनि का प्रारम्भ है। जब हम विचारशून्य होकर ॐ का जप करते हैं तो हमें ऐसा अनुभव होता है जिसे शब्दों में व्यक्त करना असम्भव है। इसे आप एक शांत स्थान, पूजा गृह या मंदिर में किसी भी आरामदायक आसन में बैठकर कर सकते हैं। मेरुदंड सीधा हो, हाथ घुटनों पर किसी मुद्रा में और आंखें बंद रख कर इसका जप करें। जब आप इसमें तन्मय हो जाएँगे तब आनंद और भारहीनता का अनुभव होगा और इस स्थिति से बाहर आने का मन ही नहीं करेगा। ऐसा मेरा अनुभव है। इस अभ्यास को कार्यक्षेत्र में भी कार्यालय प्रधान के द्वारा एक नियत स्थान और समय देकर करवाया जा सकता है जिसका फल कर्मचारियों की कार्यदक्षता पर सकारात्मक प्रभावों के रूप में देखा जा सकता है। अगर इस अभ्यास को संगीत के किसी यंत्र की ध्वनि के मेल के साथ किया जाय तो यह और भी लाभदायक सिद्ध होगा।

योग के आयाम इतने विशाल हैं कि इसका पूरा वर्णन करना मानो समुद्र के सामने बैठकर उसकी लहरों को गिनना है। योग हमारी ऋषि-परम्परा की ऐसी अनुपम भेंट है जो सभी सामाजिक बंधनों से परे है और हमें अज्ञान के अंधेरे से प्रकाश की ओर ले जाने वाला है।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

योग प्रदीप 2

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

पृष्ठ 306, ISBN: 978-81-85787-78-7

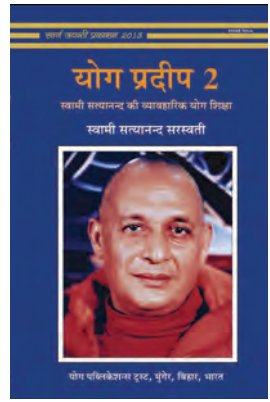

उपलब्ध

योग प्रदीप 2 में श्री स्वामीजी द्वारा 1979–81 की अवधि में देश-विदेश में आयोजित योग सम्मेलनों, शिविरों एवं बिहार योग विद्यालय, मुंगेर में आयोजित सत्रों के दौरान दिए गये सत्संगों एवं प्रेस-वार्ताओं का संकलन किया गया है। इन सत्संगों में योग एवं अध्यात्म के विभिन्न पक्षों पर बृहत् रूप से प्रकाश डाला गया है, तथा तत्सम्बन्धी प्रश्नों के व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किये गये हैं।

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

BIHAR YOGA

www.biharyoga.net
बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद
बिहार योग परम्परा की समस्त प्रकाशित कृतियाँ *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

यौगिक जीवनशैली साधना
biharyoga.net तथा *satyamyogaprasad.net* पर स्वस्थ जीवन हेतु यौगिक जीवनशैली साधना उपलब्ध है।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/
योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2020-23
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

सभी ग्राहकों के लिए महत्त्वपूर्ण सूचना

आत्मस्वरूप

हरि: ॐ

हमें यह सुखद समाचार देते हुए हर्ष हो रहा है कि जनवरी 2021 से मासिक योगा (अंग्रेज़ी) तथा योगविद्या (हिन्दी) पत्रिकाएँ सभी ग्राहकों, सहयोगियों, योगप्रेमियों, भक्तों तथा आध्यात्मिक साधकों के लिए निम्नांकित वेबसाइटों पर नि:शुल्क उपलब्ध रहेंगी –

www.satyamyogaprasad.net

www.biharyoga.net

वर्तमान कोरोनावायरस महामारी और उससे उत्पन्न अनिश्चितता के कारण योगा और योगविद्या की प्रकाशित प्रतियाँ 2021 में ग्राहकों के लिए उपलब्ध नहीं रहेंगी। इसलिए 2021 में इन पत्रिकाओं के लिए नए सदस्यता आवेदन या पुरानी सदस्यता को बढ़ाने के आवेदन स्वीकार **नहीं** किए जा रहे हैं। अत: इन पत्रिकाओं के लिए सदस्यता आवेदन **मत** भेजिए।

पत्रिकाओं सम्बन्धी परिस्थिति की जानकारी आपको समय-समय पर मिलती रहेगी।

इस बीच श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती और श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की शिक्षाओं को ग्रहण कर उन्हें अपनी दिनचर्या में आत्मसात् एवं अभिव्यक्त कीजिये ताकि आपका जीवन उदात्त और उन्नत बन सके।

आपके स्वास्थ्य, कल्याण और शांति के लिए श्री स्वामी सत्यानन्द जी के आशीर्वाद सहित,

ॐ तत्सत्

सम्पादक